कवि-श्री माला

* सिन्धी *

कवि

किशिनचन्द बेवसि

सम्पादक—अनुवादक

देवदत्त कुन्दाराम शर्मा


राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक
मोहनलाल भट्ट
मन्त्री
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
हिन्दीनगर, वर्धा
● ● ●

प्रथम संस्करण—१०००
मई, १९६२
मूल्य–रु. २/–
● ● ●

मुद्रक
मोहनलाल भट्ट
राष्ट्रभाषा प्रेस
हिन्दीनगर, वर्धा
● ● ●

आमुख

हर्षका विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति वर्धा अपने कार्य कालके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके मान्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट काव्यका परिचय 'कवि-श्री माला' की पच्चीस पुस्तकोंमें हिन्दी गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ काव्य-सर्जकका निर्णय करना एक कठिन कार्य है फिर भी अपनी सीमाओंको ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उन-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनावका कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कवियोंकी रचनाओंका चयन किया गया है उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके दो कवियोंका चुनाव किया गया है उनका चुनाव करते समय सन् १९२० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य—इस तरहसे एक विभाजन-रेखा ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९२० के पूर्वके तथा १९२० के बादके साहित्यमें प्रवाहित विचार-धारामें एक विशेष प्रकारका अलगाव-सा पाया जाता है।

सिन्धीमें कुछ ऐसी विशिष्ट ध्वनियाँ हैं जो देवनागरी लिपिमें नहीं हैं। उन ध्वनियोंको प्रस्तुत पुस्तकमें निम्नलिखित रूपसे व्यक्त किया गया है:—

ग॒—सघोष अल्पप्राण अन्तःस्फुटित कोमल-तालव्य स्पर्श ध्वनि, यथा—ग॒ोढ़ु।

ज॒—सघोष अल्पप्राण, अन्तःस्फुटित कठिन-तालव्य स्पर्श संघर्षी यथा—अज॒।

ड॒—सघोष अल्पप्राण अन्तःस्फुटित मूर्धन्य स्फोटक स्पर्श; यथा—ड॒ेखो।

ब॒—सघोष अल्पप्राण, अन्तःस्फुटित द्वयोष्ठ्य स्पर्श यथा—ब॒चो।

श्री देवदत्त कुन्दनराम शर्माजीने प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यको चुनने कार्यालयमें सम्पादित तथा अनूदित कर सारी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित चित्र का ब्लॉक सम्पादक 'हिन्दुस्तान' (सिन्धी दैनिक) बम्बईके सद्प्रयत्नोंसे उपलब्ध हुआ है। ग्रंथमाला आवरण डिजाइनको बनाकर देनेमें श्री सी. एन. आचरकरजी (डीन, सर जे जे इन्स्टीट्यूट आफ अप्लाइड आर्ट, बम्बई) का उदार सहयोग मिला है उसके लिए समिति उनकी आभारी है।

इसके अतिरिक्त चर्चा तथा अन्यान्य दृष्टियोंसे भिन्न-भिन्न प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिला है उनके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

आशा है, प्रस्तुत संग्रह पाठकोंको रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

मन्त्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

अनुक्रमणिका

कवि-श्री माला

सिन्धी



किशिनचन्द 'बेवसि'

सिन्धी साहित्य परिचय

सिन्धी भाषा
और
उसका साहित्य

• • •

अब तक सिन्धी भाषामें सिन्धी साहित्यके इतिहासपर कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई। श्री मिरीक मुहम्मद मेमणने सम्पूर्ण इतिहासके दो भागोंमें पुस्तकें लिखी हैं जिसका सारांश 'सिन्धके सूफी सन्त शाह अब्दुल लतीफ' की पुस्तिकामें दे दिया गया है, लेकिन इसमें १९२ के पहलेके कवियोंका ही आभास मात्र है। १९२ से लेकर आज तक सिन्धी भाषाके सैकड़ों कवि इस क्षेत्रको सर्वांग समृद्ध बना रहे हैं। लेकिन १९ ० ई से लेकर आज तकके कालको हम हिन्दीकी तरह गद्यकाल ही कहेंगे क्योंकि इस अवधिमें पद्यकी अपेक्षा गद्यका ही बोलबाला रहा है। आज सिन्धीमें पद्य भी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध है, फिर भी हमें कहना ही पड़ेगा कि यह युग 'गद्यका युग' अथवा आधुनिक युगके नामसे ही सम्बोधित किया जा सकता है।

गद्यकाल का आरम्भ

अंग्रेजोंने सिन्धपर १८४३ ई में विजय पाई। अन्य आवश्यक कार्योंके साथ उनका ध्यान साहित्यकी ओर भी आकृष्ट हुआ लेकिन उन दिनों सिन्धी भाषाके लिए कोई निश्चित लिपि निर्धारित न थी। मुसलमान इस भाषाको फारसी अथवा अरबीमें

लिखा करते थे और ब्राह्मण नागरीमें स्त्रियाँ गुरुमुखीमें तथा व्यापारी मुण्डा (बिना मात्राओं वाली) लिपिमें लिखा करते थे। १८५१ में सिन्धी भाषाके लिए लिपि निर्धारित की गई और तबसे सिन्धी भाषामें साहित्य निर्माणके छिटपुट प्रयत्न चल रहे हैं। सर्वप्रथम शिक्षा विभागकी ओरसे पाठ्य पुस्तकोंकी रचना हुई और कुछ पुस्तकें हिन्दी और फारसीसे अनूदित की गईं।

१८५१ से १९०० तक जो साहित्य निर्माण हुआ उसे हम संक्रमण कालीन साहित्य कह सकते हैं। विद्वानोंका मत है कि आरम्भमें मदकी कई पुस्तकें देवनागरी लिपिमें लिखी गईं थी परन्तु अरबी लिपि सिन्धीकी लिपि बन जानेके कारण देवनागरी लिपिको बड़ी ही क्षति पहुँची। अब सारा सरकारी कार्य इस लिपिमें होने लगा। अतः नौकरियाँ भी उन्हें मिलने लगीं जो इस लिपिके जानकार थे। इन्हीं कारणोंसे देवनागरीमें हस्तलिखित पुस्तकें सड़ने लगीं अँग्रेजोंके समयमें जो देवनागरीमें पुस्तकें छपीं उनमेंसे निम्नलिखित कुछ पुस्तकोंका कभी-कभी वर्णन ही आता है —

(१) सिन्धी-इंग्लिश डिक्शनरी —कैप्टन स्टैक (बम्बईमें मुद्रित) १८५५

(२) सिन्धी बोलीअ जो ग्रामर " " "

इसी व्याकरणके अन्तिम पृष्ठोंपर 'आखाणी राइ दियाच ऐ सोरठि जी' छपी है, जो शायद सिन्धी साहित्यकी पहली कहानी है।

(३) 'मदी' (पॉस्पल आफ मैथ्यू) का सिन्धी अनुवाद—कैप्टन स्टैक १८५०

(४) इंग्लिश-सिन्धी डिक्शनरी (कैप्टन स्टैक) बम्बई, १८४९

(५) सिन्धी बोलीअ जो ग्रामर (डा ट्रिम्प लन्दन और लीपजिगमें छपी १८७२) अरबी लिपि बननेके बाद भी कुछ पुस्तकें देवनागरी लिपिमें छपीं।

(६) इंग्लिश-सिन्धी डिक्शनरी (स ब परमानंद) १८९५

(७) सिन्धी-इंग्लिश डिक्शनरी (रेवरेंड शर्ट उधाराम थांवरदास मीरा स फ. मिर्जा १८७९)

(८) अक्षर धातु (सिन्धीके संस्कृत मूल धातु) रेवरेंड शर्ट

(९) सिन्धी ग्रामर (श्री भ्रमटमल) १८९२

(१०) Dictionary of Sindhi derivatives (भ्रमटमल मामलाल) १८९२ आदि।

इसके अलावा सिन्धी चौथी कक्षा तककी पाठ्य पुस्तकें सरकार द्वारा देवनागरी लिपिमें भी छपती रहीं।

प्रियतम धर्म सभा शिकारपुरवालोंने भी देवनागरी लिपिमें कन्याओंके लिए पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित कराईं।

सन् १८५४ में गुलाम हुसन मोहम्मद कासिम करेलीने 'मंगे जमींदार जी गालिह' सैय्यद मीरां मुहम्मद शाहने 'गुफातूरे ऐं गुफातूरे जी गालिह' (१८५५)

या मुफीद अस सबियां (१८६१) नामक पुस्तकें लिखीं। ये तीनों पुस्तकें इन्दीसे अनूदित की गई थीं। मुन्शी नन्दीराम मीरानीने तारीख मैमूमी का फारसीसे अनुवाद किया था। १८६५ में सिन्धके डिप्टी एजूकेशन इन्स्पेक्टर श्री नारायण जगन्नाथ (महाराष्ट्र निवासी) ने सिन्धु जो निरिवार नामक मौलिक पुस्तक लिखी। १८६२ ई में दीवान कौड़ोमल चन्दनमलने 'कोलम्बस जी तारीख' नामक पुस्तकका अंग्रेजीसे अनुवाद किया और स्त्री शिक्षाके लिए पको 'हु नामक एक मौलिक पुस्तक लिखी। १८७० ई में साधु नवलराय तथा मुन्शी उधाराम थीरचन्दानीने रासेलास नामक पुस्तकका अंग्रेजीसे अनुवाद किया तथा मुन्शी उधारामने ईसप जूं आखाण्यूं नामक पुस्तक भी लिखी। १८६४ से १८७० तक दीवान कैवलरामने बड़ी सुन्दर भाषामें ग्रन्थ मुकिड़ी 'गुलफुल' और 'गुल शक्कर' नामक तीन मौलिक ग्रन्थ लिखे। १८७९ में मिर्जा कलीच बेगने Bacons Essays का मकामात अस हिकमत के नामसे अनुवाद किया।

१८८ से लेकर १९१४ तक जिन-जिन विद्वानोंने रचनाएँ कीं उनको भी हम भूल नहीं सकते। यह काम अनुवाद काम था। शिकारपुरके श्री गोवरदास चोइरदास सक्करके श्री हरीसिंह तथा हैदराबाद (सिन्ध) के श्री विनोमल वसरमलने प्रकाशकोंसे प्रथम गई पुस्तकें अनुदित करवाकर छपवाई। उनमेंसे कुछ चुनी हुई पुस्तकें हातिमताई चार दरवेश गुलबकावली ताजमलूक आदि हैं। इसके अलावा श्री ठाकुरदास आलूखोमलने 'चन्द्रकान्ता' तथा 'भूतनाथ' का प्रकाशन करनेके लिए अपना प्रेस खोला। ये पुस्तकें खूब बिकीं। चन्द्रकान्ता और 'भूतनाथ' एक साथ प्रकाशित न होकर कई भागोंमें प्रकाशित हो रही थीं लोगोंमें इतना धैर्य नहीं था कि वे छपने तक उन भागोंकी प्रतीक्षा करें। अतः कई लोगोंने इन उपन्यासोंको पढ़नेके लिए हिन्दी सीखना आरम्भ कर दिया। इसमें अत्युक्ति न होगी कि इन्हीं उपन्यासोंको पढ़नेके लिए कई सिन्धियोंने हिन्दी सीखी। लेकिन साहित्यकी दृष्टिसे इनका इतना मूल्य नहीं था।

प्रथम उत्थान-काल (कौड़ामल-कलीच बेग काल)

श्री कौड़ोमल और मिर्जा कलीच बेगके साहित्य-क्षेत्रमें पदार्पण करनेसे ही साहित्यमें नव चेतना आई। आरम्भमें श्री कौड़ोमल चन्दनमल (मियाँ निवासी) ने सरकारकी ओरसे पाठ्य पुस्तकें लिखीं। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि श्री कौड़ोमलजी ब्रह्म समाजसे प्रभावित थे। साधु नवलराय तथा साधु हीरानन्दजी (साधु द्वय) ने ही सिन्धमें ब्रह्म समाजकी नींव रखी और श्री कौड़ोमलजी उनके अभिन्न मित्र थे। उन दिनों इन साधु द्वयने यूनियन एकडमी नामक हाईस्कूलकी स्थापना की जिसमें बंगालके प्रसिद्ध ब्रह्म-समाजी श्री ब्रह्म बान्धव उपाध्याय (जो बादमें क्रिश्चियन हो गए थे।) प्रचारक तथा अध्यापक होकर

आए थे। इनकी प्रेरणासे ही श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरके बड़े भाई श्री सतीशचन्द्रजी हैदराबादमें सेशन्स जज होकर आए थे। उन्होंने वहाँ ब्रह्म-समाजका उद्घाटन मुहूर्त किया था। इसके बाद श्री केशवचन्द्र सेनके भतीजे श्री नन्दलाल सेन आए। ऐसे महानुभावोंकी प्रेरणासे ही सिन्धीके लेखक तैयार हुए।

श्री कौड़ोमलजीने लगभग ६ पुस्तके लिखीं जिनमें कई तो अनूदित हैं। बाकी १०-१२ पुस्तक उनकी मौलिक रचनाएँ हैं। उनकी सबसे बड़ी सेवा है सिन्धी भाषाको साहित्यिक अभिव्यञ्जनाके अनुरूप बनाना। यद्यपि उनके पहले राजर्षि दयाराम गिदूमल (सेशन्स जज) तथा श्री केवलरामने इस दिशामें प्रयत्न किए फिर भी सफलता श्री कौड़ोमलको ही मिली। साधु नवलराय तथा साधु हीरानन्दके प्रभावके कारण श्री कौड़ोमलजी स्त्री शिक्षाके प्रेमी बन गए, अतः उन्होंने नारी चरित्र तथा पनो पहु लिखकर इस दिशामें सर्वप्रथम स्तुत्य प्रयास किया।

यदि श्री कौड़ोमलजी विभिन्न स्थानोंसे बुजुर्गो विविध लिखे हुए श्लोकोंको एकत्रित करके न छपवाते तो सामी नामसे प्रसिद्ध सामी चइनरायका काव्य न मालूम किस अन्धकारमय गर्तमें पड़ा रहता। श्री कौड़ोमलने बंकिम बाबूकी तीन छोटी कहानियोंका बड़ी सरल और सुन्दर सिन्धीमें अनुवाद किया।

मिर्जा कलीच बेग

मिर्जा कलीच बेगकी गणना सर्वतोमुखी प्रतिभा वाले साहित्यकारोंमें की जा सकती है। इन्होंने अपने जीवन-कालमें कम-से-कम दो सौ पुस्तकें लिखीं। यद्यपि इनकी अधिकांश पुस्तकें अनुवाद ही हैं, फिर भी इनकी मौलिक रचनाएँ भी कम नहीं हैं। यदि इन्होंने 'रुबाइयात उमर खय्यामका' रुबाइयोंमें ही अनुवाद किया तो मौलुतिजी बयूली भी रुबाइयोंमें ही लिखीं। इन्हें काव्य-जगत्में प्रथम रुबाईकार होनेका गौरव प्राप्त है। इन्होंने दो मौलिक उपन्यास दिलाराम (१८८८) तथा जीनत (१८९) लिखे। कुछ विद्वानोंका मत है कि ये उर्दूके अनुवाद हैं फिर भी इनका रंग रूप और ढाँचा बिलकुल सिन्धी ही लगता है।

उन दिनों अहमद खान बस्वाणीने गुलबकावली तथा नीहू निमावणु दो उर्दू उपन्यास (१८९ में) उर्दूसे अनूदित किए। आगूर मुल्क अन्खाइने गुलुस्तान और बाग मालिम नामक उपन्यास लिखे। मुहम्मद सिदीक मुसाफिरने मुमताज़ दमसाज़ महरूर बानू तथा गुलबदन नामक उपन्यास लिखे। दीवान प्रीतमदास हुकमत रायने अजीब भट नामक मौलिक उपन्यास लिखा।

श्री लालचन्द अमर डिनामलने हुर मखीम जा (१९०१) तथा 'चोथि जो चंड' (१९ ५) नामक दो मौलिक उपन्यास लिखे। श्री भेरूमल महरचन्द आडवाणीने आनन्द सुन्दरी तथा मोहिनी बाई दो मौलिक उपन्यास लिखे। इस कालका अन्तिम मौलिक उपन्यास डॉ गुरबखशाणी द्वारा लिखित नूरजहान है।

प्रारम्भिक कालके नाटक

नाटककारोंमें भी मिर्ज़ा कलीच बेगका नाम सर्वप्रथम लिया जा सकता है। इन्होंने कई नाटक लिखे जिनमेंसे लैला मजनूँ (१८८०) और खुरशीद नामक दो नाटक रङ्गमञ्चपर भी खेले जा चुके हैं। इन्होंने १८९६ में शकुन्तला नाटकका भी अनुवाद किया। श्री कौड़ोमलने १८८८ में हर्षदेव रचित रत्नावली नामक नाटकका बड़ी सुन्दर और मुहावरेदार भाषामें अनुवाद किया।

१८९४ में डी जे सिन्ध कालेज (करांची) के प्रिन्सिपल श्री जैक्सन तथा फारसी प्रोफेसर पान्धाके प्रयत्नोंसे सिन्ध कालेज अमेच्युअर ड्रामैटिक सोसाइटी की स्थापना हुई और सिन्धीका पहला रङ्गमञ्च स्थापित हुआ। इस रङ्गमञ्चपर खेलनेके लिए सन् १८९४ ई में श्री जेठानन्द किशनदासने नल दमयन्ती नामक सर्वप्रथम नाटक लिखा।

इसके बाद इस रङ्गमञ्चपर खेलनेके लिए दीवान लीलारामसिंहने 'हरिश्चन्द्र (१८९४) और द्रौपदी (१९०५) नामक दो नाटक लिखे जिनका कथानक महाभारतसे लिया गया था। उन्होंने रामायण (१८९८) नामक नाटक लिखा जो जनताको बड़ा प्रिय लगा। इनके अलावा सुर्जन राजा (१८९५) और 'मोहन तारिका नामक दो मौलिक नाटक और लिखे।

इसके बाद इसी रङ्गमञ्चपर खेलनेके लिए मिर्ज़ा कलीच बेगने शेक्सपियर के कई नाटकोंका अनुवाद किया लेकिन उनके पात्रोंके नाम तथा स्थान बदलकर उन्हें सिन्धी रूप दे दिया गया। वे नाटक इस प्रकार हैं —

(१) 'इश्का दिलदार" (१८९७) Merchant of Venice का अनुवाद
(२) "शाह एलिया (१९ ०) King lear का अनुवाद
(३) "फेरोज़ बिन अफरोज़ (१९०२) लॉर्ड लिटनके उपन्यास 'Night and Morning का नाटकीकरण
(४) "गमख्वार मर जाना" (१९ ८) Cymbelive का अनुवाद।
(५) "अज़ीज़ ऐं शरीफ" (१९०९) Two Gentlomen of Verona का अनुवाद
(६) "गुलज़ार ऐं गुलनार (१९०९) Romeo and Juliet का अनुवाद
(७) "शाहज़ादा बहराम" (१९११) Hamlet का अनुवाद
(८) नेकी ए बदी" (१९११) एक उर्दू नाटकसे अनूदित

इसके अलावा श्री मेघमल महरचन्दने किंग जॉन (King John) का तथा लेखराज अज़ीज़ानीने शेरीडनके पिज़ेरो (Pizzaro) नामक नाटकका सन् १९२ ई में अनुवाद किया। इस प्रथम उत्थान कालके मौलिक नाटककार

श्री लालचन्द दर्यानी भी थे जिन्होंने रला ज़मींदारी जुल्म 'ज़माने की लहिर' तथा बुध को सिकार नामक चार मौलिक नाटक लिखे। श्री लालचन्द अमर डिनोमल्ने सामाजिक बुराइयोंका दिग्दर्शन करानेके लिए मज़दू धर्म (१९ १) तथा हैण कौन वेस नामक दो मौलिक एकांकी लिखे।

सिन्धी भाषाका साहित्यिक रूप

मैं पहले ही लिख चुका हूँ कि राजर्षि दयाराम गिदूमल तथा श्री कौड़ोमलने सिन्धी भाषाको साहित्यिक रूप देनेका प्रयत्न किया किन्तु इस दिशामें श्री भेरूमल महरचन्द तथा उनसे भी बढ़कर श्री परमानन्द मेवारामने सिन्धी भाषाको सबल तथा साहित्यिक अभिव्यञ्जनाके योग्य बनानेका सफल प्रयत्न किया। इन्होंने ब्रह्म-बान्धव बन्धोपाध्यायके साथ ईसाई धर्म ग्रहण किया और उस धर्मके प्रचारके लिए जोति नामक सिन्धी साप्ताहिक पत्रिका १८९६ में निकाली जो ४ वर्षों तक सिन्धी भाषाकी सेवा करती रही। ईसाई धर्मकी बातोंके अलावा कई अन्य विषयोंपर भी सुन्दर लेख छपते रहे, जिनकी भाषा बड़ी प्राञ्जल और मार्जित रहती थी। इसके कई छोटे-छोटे चुटकुले उसमें छपते थे। उन सब चुटकुलोंका संग्रह कर १९१२ में दिलबहार नामक पुस्तक (चार भागों) में प्रकाशित की गई। इसके अलावा जो सुन्दर निबन्ध जोति में छपते उनका भी संकलन श्री परमानन्दजीने गुल फूल नामक पुस्तक (दो भागों) में प्रकाशित किया।

सिन्धी भाषाकी सबसे बड़ी सेवा जो श्री परमानन्द मेवारामजीने की वह थी उनकी सिन्धी कोष की देन। इसके लिए उन्होंने अपने जीवनका बड़ा भाग अर्पित किया। सिन्धी भाषाका यदि कोई प्रामाणिक कोष है जिसे सबके रूपमें स्वीकार किया जाता है तो वह इन्हींका 'सिन्धी कोष' है। इन्होंने एक अँग्रेजी सिन्धी कोष' भी तैयार किया।

धार्मिक साहित्य

सिन्धी भाषामें धार्मिक-साहित्य भी काफी मात्रामें प्रकाशित हुआ है।

करांचीके श्री तेजूराम धर्मदासी सनातन धर्म पत्रिका की ओरसे श्रीमद्भगवद् गीता श्रीमद्भागवत तुलसीकृत रामायण' आदि कई धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। उन्होंने कुछ सामाजिक उपन्यास भी प्रकाशित कराये।

सबसे पहले राजर्षि दयाराम गिदूमलने सिन्धीमें गीता तथा पातञ्जल योग दर्शनपर विद्वत्तापूर्ण टीकाएँ लिखीं। सिन्ध साहित्यके जप जी साहब तथा सुखमनी साहबपर भी टीकाएँ लिखीं। इसके अलावा सात बड़ी-बड़ी जिल्दोंमें मन जा चह चूक नामक पुस्तक लिखी जिसमें पौर्वात्य और पाश्चात्य दर्शन-शास्त्रोंपर बड़ी बारीकीसे विचार-विनिमय किया गया है।

हैदराबाद गुरु संगत की ओरसे सिख धर्मके विद्वान् श्री फतहचन्द मेंघराजने श्री 'गुरु' ग्रन्थ साहबका 'गुरवाणी' नामक मासिक पत्रिकाके माध्यमसे ३० वर्षोंके अथक परिश्रमसे सिन्धीमें अनुवाद प्रकाशित किया। भारत-विभाजनके पहले यह अप्राप्य हो गया था अतः श्री लालचन्दजी पुनवाणीने बम्बई गुरु मन्दिर द्वारा उसका पुनर्नवीकरण किया है।

तीसरे हैं साधु वास्वाणीजी जिन्होंने विभाजनके पहले ही श्रीमद्भगवद् गीता तथा सन्तों और ग्रन्थ साहबकी वाणीपर प्रचुर मात्रामें साहित्य प्रकाशित किया था और विभाजनके बाद भी सन्त मीरा कालेज पूनाकी ओरसे इस कार्यको सुचारु रूपसे निभा रहे हैं।

प्रिन्सिपल मानकराम मलकानी द्वारा किया गया श्रीमद्भगवद् गीता का पद्य बद्ध अनुवाद बड़ा ही सुन्दर बन पड़ा है। पं. द्वारका प्रसाद चतुर्वेदीने लोकमान्य तिलकके गीता रहस्य सुन्दर अनुवाद किया है।

सारांश यह कि सिन्धी भाषामें मुसलमानी तथा हिन्दू धार्मिक-साहित्य प्रचुर मात्रामें उपलब्ध है।

प्रथम उत्थान-काल (सिन्धी भाषाकी पत्र पत्रिकाएँ)

सिन्धी पत्र तथा पत्रिकाओंने भी सिन्धी साहित्यकी अच्छी सेवा की है। सर्वप्रथम सन् १८८४ ई. में सिन्धु सुधार नामक पत्र निकला। १८९ में साधु हीरानन्दने सरस्वती नामक मासिक पत्रिका निकालना शुरू की जिसमें धार्मिक सामाजिक चारित्रिक तथा मनोरंजक विषयोंपर सुन्दर निबन्ध छपते थे। १८९१ में श्री शिवराम ठिकाकचन्द बचाणीने प्रभात नामक साप्ताहिक पत्रिका निकालनी आरम्भ की। लगभग इन्हीं दिनों करांचीसे सनातन धर्म पत्रिका (मासिक) प्रकाशित होने लगी। १८९६ में श्री परमानन्द मेवारामने ज्योति नामक पाक्षिक समाचार पत्र निकाला। १९१२ में पं. लोकराम नयनाराम शर्माने देवनागरी लिपिमें सिन्धु भास्कर नामक मासिक पत्रिका निकालनी आरम्भ की। उन्हीं दिनों श्री कुन्दनमल दीपचन्द त्रिवेदासाणीने आनन्द नामक धार्मिक पत्रिका निकाली। श्री तोलाराम बालाणीने माता नामक राष्ट्रीय पत्रिका निकाली।

राष्ट्रीय साहित्य

इस कालमें लोकमान्य तिलक द्वारा लिखित पुस्तिकाके अनुवादके अतिरिक्त कोई साहित्य उपलब्ध नहीं है। यह छोटी पुस्तिका थी। पुस्तक छपते ही अनुवादक पं. गोवर्धन शर्मा प्रकाशक श्री चेटूमलजी तथा प्रिन्टर श्री वीरूमलजीको गिरफ्तार कर लिया गया। परिणामस्वरूप लेखकको ६ वर्ष तथा दो अन्य मित्रोंको दो-दो तीन वर्ष कठोर कारावासका दण्ड दिया गया।

निबन्ध साहित्य

सिन्धीमें निबन्ध-साहित्य इतनी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध नहीं है फिर भी श्री लीलाराम प्रेमचन्द तथा श्री दयाराम वसणमल मीरचन्दाणीने कई लेखकोंके निबन्ध एकत्रित कर सन् १९ ७ में 'गुलदस्ता' नामक निबन्ध-संग्रह छपवाया।

इस कालके निबन्धकारोंमें निम्नलिखित विद्वानोंके नाम उल्लेखनीय हैं —

१—राजर्षि दयाराम २—श्री कैवलराम सलामतराय ३—श्री नारायण जगन्नाथ वैद्य (महाराष्ट्र) ४—श्री उधाराम थांवरदास ५—साधु नवलराय ६—साधु हीरानन्द ७—श्री कौड़ोमल ८—मिर्जा कलीच बेग ९—श्री परमानन्द मेवाराम १०—श्री निर्मलदास फतहचन्द ११—श्री भेरूमल महरचन्द आदि।

द्वितीय उत्थान-काल (जेठमल-लालचन्द युग) सन् १९१४–१९४७

द्वितीय उत्थान-काल सिन्धी साहित्यके लिए उत्साहवर्धक काल माना जाता है। सन् १९१४ ई० में सिन्धी साहित्य सोसायटीकी नींव रखी गई। श्री जेठमल परसराम गुलराजाणी तथा श्री लालचन्द अमर डिनोमल जगत्याणी इसके मुख्य कार्यकर्ता थे। इस सोसायटीकी ओरसे प्रति माह एक-न-एक सुन्दर पुस्तक छपती थी।

राजर्षि दयारामके सुपुत्र श्री कैवलरामजीने एक बड़ी रकम 'सिन्धी लायब्रेरी' नामक संस्थाको एक सौ सुन्दर और अन्य उत्तम पुस्तकोंके लिए प्रदान की। श्री जेठमलजी इस संस्थाकी आत्मा थे। श्री जेठमलजीका जन्म १८८६ में हैदराबादमें हुआ था। यद्यपि इन्होंने मैट्रिक तक ही अध्ययन किया था फिर भी वे प्रोफेसर बन गए। इन्होंने सिन्धी-साहित्यकी अनुपम सेवा की। सिन्धी लायब्रेरीकी ओरसे एक सौ पुस्तकें प्रसिद्ध करानेका संकल्प इन्होंने पूरा किया। वे जैसे अनुपम लेखक थे वैसे ही अनोखे व्याख्याता भी थे। वे थियोसॉफिस्ट थे। डॉ० एनीबेसण्टके समयमें इन्होंने अपने व्याख्यानों तथा 'भारतवासी' नामक पत्रिका द्वारा सारे सिन्धमें एक नए उत्साहकी लहर फैला दी। आप हिन्दीके भी अच्छे जानकार थे। सूरदासके कृष्ण सम्बन्धी पदोंसे इनको बड़ा प्रेम था। वे दिन भुलाए नहीं जा सकते जब थियासॉफिकल लॉजमें कृष्ण परक पद गा-गाकर उनकी सुन्दर व्याख्या करते थे। शेक्सपियरके दो उपन्यासोंका 'हैमलेट' और 'तूफान' के नामसे अनुवाद किया। आपने जर्मनीके विद्वान गटेके 'फाउस्ट' का अनुवाद भी किया। इसके अलावा आपने कई धार्मिक पुस्तकें भी लिखीं जिनमें 'मौजु माहेर्ट कोन' नाम जाती 'ऐ चर्मु' 'मौजु हिंदु वहालो' 'धर्म जा नेमु' 'पूरब जोगी' 'अप श्री साइवर टीरा" आदि मुख्य हैं। आपने दूसरे भी कई ग्रन्थ लिखे। आपकी भाषा प्रांजल तथा बड़ी ओजस्विनी थी। विभाजनके बाद १९४८ में आपका देहान्त बम्बईमें हुआ।

लालचन्द अमर डिनोमल

श्री लालचन्दजी भी इस कालके मुख्य स्तम्भ माने जाते हैं। आपका जन्म २५ जनवरी १८८५ में हैदराबादमें हुआ था। आपको साहित्यसे बड़ा प्रेम था। आप आजीवन साहित्यकी साधनामें लगे रहे। श्री जेठमलजीके साथी बनकर आपने सिन्धी साहित्य सोसायटी और सिन्धी लायब्रेरी के लिए खूब पुस्तकें लिखकर उनका हाथ बटाया। आपने उपन्यास नाटक कहानियाँ निबन्ध तथा समालोचनात्मक पुस्तकें लिखी। १९२१ में रवीन्द्रनाथ ठाकुर सोसायटीका जन्म हुआ। साहित्य प्रकाशनके साथ-साथ रवि बाबूके नामपर रंगमंचका भी आयोजन हुआ। इस रंगमंचपर खेलनेके लिए इन्होंने उमर मारुई नामक नाटक लिखा जो बड़ी सफलता पूर्वक खेला गया। सिन्ध विभाजनके बाद आप बम्बई आए। यहाँपर भी इनकी साहित्य साधना चलती रही। आजीवन अध्यापनका कार्य करते रहे। बम्बईमें भी हाइस्कूल फार सिन्धीज तथा बम्बई यूनिवर्सिटी के लिए परीक्षार्थी तैयार करते रहे। सन् १९२२ में गाँधीजीके आन्दोलनके समय आपको जेलमें रहकर भी इन्होंने कई पुस्तकें लिखी। इनका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली था। ६९ वर्षकी अवस्थामें आपका सन् १९५४ ई में बम्बईमें स्वर्गवास हुआ।

रचनाएँ — सिन्धके १–शाह २–सचल ३–सामी इन तीन कवियों पर आपने समालोचनात्मक निबन्ध लिखे। इन निबन्धोंके अलावा विभिन्न विषयोंपर भी आपने कई निबन्ध लिखे हैं।

अन्य रचनाएँ —१–चोथि जो चंडु २–सदा गुलाबु ३–मध सा सखिके ४–मोम बन्यं दिस्यूँ ५–किकिनी म जो कप्टु, ६–रुलनि मुठि ७–चूनो ८–दुखनि दबी जिन्दगी ९–हुर मखीअ जा १०–रामु बादिशाहु ११–प्रेम जो वसु, १२–साहाणी धाग १३–हजरत मुहम्मद रसूल १४–मबनु मूँ गरो १५–मुसाफिरी अ जो मखो १६—भाउमियुनि जो दिलदारी।

नाटक —१–उमर मारुई, २–मुहिंजी मेहार ३–मेमकी बेज ४–नफ्रु धर्म।

अन्य ग्रन्थ :—१–मुंब कैदीरो २–हिंदू नार्युनि सां वैस ३–कज्जावली ४–साइरान मुस ५–मानिक मोती माल आदि तथा अन्य कई ग्रन्थ लिखे। उनमेंसे अभी कुछ अप्रकाशित हैं।

इस कालके अन्य लेखक

डॉ होतचन्द मूलचन्द गुरबक्शाणी (जन्म १८८३ मृत्यु १९४६) ये डी जे सिन्ध कालेजमें प्रिन्सिपल थे। आपने कालेजों तथा यूनिवर्सिटीकी परीक्षाओंके लिए सिन्धी भाषाको स्थान दिलाया। आपने ४ जिल्दोंमें शाह जो रसालो पर टीका-ग्रन्थ लिखे।

भेरूमल महरचन्द (जन्म १८७५, मृत्यु १९५) यद्यपि इनका वर्णन पहले हो चुका है फिर भी इस उत्थान-कालमें आपने भी कई पुस्तकें लिखीं जिनमेसे मुख्य है सिन्धी बोलीअ जी तारीख अन्कल टॉम्स केबिन (Uncle Tom's Cabin) का गोलनि जा मुन्दर नामसे संक्षिप्त अनुवाद तथा सिन्धु जो सैलानी।

मुहम्मद सिद्दीक मेमण आप ट्रेनिंग कालेजके प्रिन्सिपल थे। आपकी रचनाएँ इस प्रकार है —१–तारीख ताहिरीअ जो हस्त वासु २–मजमून नवीसी ३–इमारतीज जो दौर ४–सिन्धीअ जी अरबी तारीख (केवल पद्य)।

आचार्य गिदवानी (जन्म १८९ मृत्यु १९३५) आपका पूरा नाम है आसूदोमल टेकचन्द गिदवानी। वे आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटीसे एम ए हुए थे। इण्डियन एज्यूकेशनल सर्विसमे इलाहाबादके सरकारी कालेजके कई वर्षोंतक प्रोफेसर रहे। उसके बाद गांधीजीके १९२१ वाले आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण जेल भी गए तथा अहमदाबादके राष्ट्रीय कॉलेजके प्रिन्सिपल होनेके कारण आचार्यके नामसे प्रसिद्ध हुए।

श्री गिदवानीजीने अन्य पुस्तकके अलावा कालिदासके रघुवंश 'मालविकाग्निमित्र' तथा विक्रमोर्वशी'का सिन्धीमे संक्षिप्त अनुवाद प्रस्तुत किया और रव माता नामक पुस्तक लिखी। इन पुस्तकोंके अतिरिक्त इन्होंने कुछ निबन्ध भी लिखे है।

प्रोफेसर नारायणदास रतनमल मलकानी एम ए उत्तीर्ण करनेके बाद आचार्य कृपालानीके साथी आप मुजफरपुर कालेज (बिहार) में कई वर्षों तक प्रोफेसर रहे। सन् १९२१ ई मे नौकरी छोड़कर आप गांधीजीके आन्दोलनमें शामिल हुए और कई बार जेल हो आए। गांधीजीकी आज्ञानुसार १९१ मे सिन्धमें आप रचनात्मक कार्यके लिए लौट आए। वर्षों तक आप सिन्ध राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके अध्यक्ष रहे। आपकी भाषा बड़ी ही प्राञ्जल और मँजी हुई है। यदि आपको ग्रामीण भाषाका विशेष ज्ञाता कहे तो अत्युक्ति न होगी। आजकल आप राज्य-सभा (एम पी) के सदस्य है तथा भारत सेवक समाजके सक्षम स्तम्भ माने जाते है।

रचनाएँ —अनूदित ग्रन्थ —१ हिन्द स्वराज्य २ महात्मा गांधीअ जी आत्म कहाणी ३ जवाहिर जीवनी।

मौलिक — गोठाणी वहिर में ग्रामीण भाषामें आपने ग्रामीणोका दिग्दर्शन बड़ी ही ओजस्विनी भाषामें किया है। बच्चोंके लिए— बाराणूं केम्पूं कश्मीर जो सैरु अलाखाना तथा गुजरात।

बाल-साहित्य

दयाराम वसणमल मीरचन्दाणी (जन्म मार्च १८८०) वे ३२ वर्षों तक सरकारी शिक्षा-विभागके अन्तर्गत अध्यापक रहे। आपने कराँचीके प्रसिद्ध नारायण

पश्चात सरकारी हाईस्कूलके मुख्याध्यापक पदसे अवकाश ग्रहण किया। आप सिन्धी भाषाको देवनागरी लिपिमें लिखनेके समर्थक हैं।

रचनाएँ — सिन्धी ग्रामर सभी हिसाब तथा शुद्ध सिन्धी नमूद।

सामराज निर्मलदास (जन्म-काल सन् १८८१ ई.) ये हिन्दी और फारसीके अच्छे विद्वान हैं। इनके लेख 'सिन्धु' 'गुल समीर' तथा 'कालेज मैगजीन' में खूब छपते थे। इनकी स्याली मस्का नामक पद्यबद्ध पुस्तक प्रकाशित हुई थी।

मंघाराम उधाराम मलकानी (जन्म १८९६) भारत विभाजनसे वर्षों पहले से भारतमें विभिन्न स्थानोंमें प्रोफेसर रह चुके हैं। आजकल जयहिन्द कालेज बम्बईमें प्रोफेसर हैं। सिन्धके बाहर रहकर भी इन्होंने सिन्धी साहित्यकी अच्छी सेवा की है। आप सिन्धीके प्रसिद्ध एकांकीकार हैं। आजकल आलोचनात्मक साहित्य प्रकाशित करनेमें विशेष रुचि रखते हैं। इन्होंने भी रवि बाबूकी 'गीतांजलि' का गद्यमें सुन्दर अनुवाद किया है।

इस कालके फुटकर लेखक

१ वाधूमल मूलचन्द

रचनाएँ — सामी अ जा सलोक पर टीका कृष्ण माला।

२ नारायणराम धर्मदास मीरचन्दानी

रचनाएँ —मेघदूतका पद्य-बद्ध अनुवाद तथा छोटे-मोटे नाटक।

३ तीर्थ बसन्त

रचनाएँ —रवि बाबूकी चित्रा का सुन्दर भाषामें अनुवाद।

विपिन धूं निबन्ध-ग्रन्थ (सिन्ध सरकार द्वारा पुरस्कृत।)

जवाहिर जीवनी प जवाहरलालजीकी आत्म-कथाका अनुवाद।

४ दीपचन्द तिलोकचन्द

५. लोलाराम ठारूमल माखीजानी इन्होंने कई नाटक लिखे हैं।

६ देवदत्त कुन्दाराम शर्मा आनन्द मठका अनुवाद सरदार वल्लभ भाई पटेलकी संक्षिप्त जीवनी तथा बाल-साहित्यपर कई लेख। कालिन हेमिंग्स् जा कारनामा तथा छह कहानियाँ।

७ पं द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी छत्रसाल (तीन भाग) लोकमान्य तिलककी गीता तथा कई अन्य पुस्तकें।

कहानी साहित्य

श्री लालचन्दने हुर मखीम जा ऐं फिरिंगीअ जा वण्ट लिखकर सिन्धी कहानीका आरम्भ किया। कौडूमल चंदनमलने देवनागरी लिपिमें अज्ञात लेखक द्वारा लिखी हुई आयानी राइ दियाच की सबसे पहले प्रकाशित कराई थी।

श्री भेरूमल महरचन्दने प्रेम जा मराम्रु तथा श्री निर्मलदास फतहचन्दने सरोजिनी नामक कहानी लिखी।

इस कालके प्रमुख कहानीकार यों हैं

१ आसानन्द मामतोरा— फैल्मूफ
२ असटमल भावनाणी— हीरो ऐं पवित्र प्रेमु
३ गानकराम धर्मदास— धर्मराइ जी वही   जीवति जो असु

उसी समय हैदराबादसे श्री मेलाराम वासवाणीने सुन्दर साहित्य नामक मासिक पत्रिका निकालनी आरम्भ की। इसमें भारतके प्रसिद्ध कहानीकारोंकी कहानियाँ अनूदित होने लगी जिनमें मुख्य कहानीकार रवि बाबू रणवीर, सुदर्शन तथा मुन्शी प्रेमचन्दजी थे जो सिन्धी पाठकोंके लिए विशेष लोकप्रिय बन गए। १९३३ में श्री बूलचन्द राजपालने सिन्धू नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित करनी आरम्भ की। यही अर्सोमें यही एक पत्रिका थी जिसका साहित्यिक मूल्यांकन किया जा सकता है। अन्य लेखोंके साथ इसमें कहानियाँ भी छपने लगीं जिनमें कई मौलिक थी। इनके मुख्य लेखक थे–सर्वश्री मल्क अस्का बबो मिर्जा कादिर बेग प्रभदास मीरचन्दाणी तथा आसानन्द मामतोरा। इसके अलावा १— रहन २— कहाणी ३— आसा ४—'भारत जीवन साहित्य मण्डल' नामक पत्रिकाएँ भी खूब कहानियाँ प्रकाशित करने लगीं।

सारांश यह कि सन् १९२ से लेकर १९४५ तक सिन्धीमें सैकड़ों कहानियाँ अनूदित हुईं। इस बीच कई मौलिक कहानियाँ पुस्तक रूपमें भी प्रकाशित हुईं। यहाँ स्थानाभावसे लेखकोंके नामोंका ही उल्लेख किया जाता है —

लेखक	रचना
१—श्री जेठमल परसराम	चमिड़ा पोश जूँ आखाण्यूँ
२—श्री प्रभुदास	अन्दर न ज उर्मिमा
३—श्री उसमान अली अनसारी	पंज
४—श्री आसानन्द मामतोरा	जीवति–प्रेम ऐं पाप जूँ कहाण्यूँ
५—मिर्जा कादिर बेग	मिस रुस्तमजी ऐं मोहिनी
६—श्री गोविन्द पञ्जाबी	सई अमुई रैगिस्तानी फूल
७—श्री बिहारी छाबिड़या	सिन्धी कहाण्यूँ
८—श्री केवू तुलिस्याणी	मञ्जरी कोलिहूणि
९—श्री मदन पञ्जाबी	मेघु
१०—श्री गीरगु बाबाणी	हूम
११—श्री लछिमण राजपाल	नर्मो जमानो
१२—श्री आनन्द गोलाणी	इनसान
१३—श्री जीवनु नरियाणी	इथु न आह
१४—श्री अमार	रोम निमिनी
१५—श्री हरु सदारंगाणी	भीमो बरी

निबन्ध

इस कालमें जो निबन्धकार हुए, उनमेंसे कइयोंके नाम तो आ चुके हैं लेकिन कुछ ऐसे लेखक रह गए हैं जिनका विशेष रूपसे उल्लेख होना चाहिए। इनके नाम इस प्रकार हैं —

१—प्रोफेसर लालसिंह अजवाणी २—श्री फतहचन्द वासवाणी ३—श्री लेखराज (अज़ीज़) ४—श्री गोविन्दराम भाम्भा आदि।

बाल-साहित्य

इस कालमें बाल-साहित्य भी पर्याप्त मात्रामें प्रकाशित हुआ। श्री मेवाराम वासवाणीने 'गुल फुल' नामक मासिक पुस्तिका द्वारा श्रीमती कमला हीरानन्द तथा बालकनि जी बारी द्वारा निकलनेवाली मासिक-पत्रिकाने इस क्षेत्रमें कई छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ प्रकाशित की हैं।

राष्ट्रीय साहित्य

इस कालमें विभिन्न लेखकों द्वारा रचित पुस्तकोंके अलावा हैदराबाद के कौमी साहित्य मण्डलने जिसके सञ्चालक श्री घेवमल जयरामाणी थे कई देशभक्तोंकी जीवनियाँ छपवाईं तथा उस समय तक लिखे हुए विभिन्न कवियों द्वारा रचित राष्ट्रीय गीतोंको संकलित कर छपवाया। इसके अलावा श्री प्रभुराम ब्रह्मचारी तथा श्री दीपचन्दने भी कुछ पुस्तकें 'नवजीवन साहित्य मण्डल द्वारा' प्रकाशित कीं।

धार्मिक साहित्य

इस कालमें धार्मिक-साहित्यका भी प्रचुर मात्रामें प्रकाशन हुआ। अन्य धार्मिक पुस्तकोंके अलावा स्वामी विवेकानन्द तथा स्वामी रामतीर्थकी कुछ पुस्तकोंका भी अनुवाद हुआ। इस क्षेत्रके मुख्य लेखक हैं—दीवान चन्दनराय आडवाणी श्री टहलराम आनूरामल वकील श्री जेठमल परसराम पं. लधूराम शर्मा पं. द्वारका प्रसाद शर्मा श्री फतहचन्द मेवराम आदि। इसके अलावा निम्नलिखित प्रकाशन मण्डल इसके लिए प्रयत्नशील हैं —१ श्री वासनशाह ट्रस्ट, २ ब्रह्म विद्या माला ३ सनातन धर्म सभा ४ गुरु सगत ५. ब्रह्मो समाज ६ आर्य समाज ७ थियो-सॉफिकल सोसायटी आदि-आदि।

द्वितीय उत्थान-कालके कवि

मिर्जा कलीच बेगका वर्णन मैंने 'शाह लतीफ' वाली पुस्तिकामें कर ही दिया है। श्री किशिनचन्द 'बेवस' का वर्णन आपके सामने प्रस्तुत ही है। इस कालके शेष कवियोंका संक्षेपमें वर्णन इस प्रकार है —

इन पत्रिकाओंमें अनूदित कहानियों और धारावाहिक उपन्यासोंके अलावा मौलिक कहानियाँ उपन्यास तथा विविध विषयोंपर निबन्ध प्रकाशित होने लगे। इधर अजमेर, दिल्ली जयपुर, अहमदाबाद आदि कई स्थानोंमें भी साहित्यिक प्रगति जोर पकड़ने लगी और अब तो यह कहते हुए गर्व होता है कि सिन्धीके साहित्यकार समयको देखकर सतर्क और जागरूक हो गए हैं। जितना साहित्य सिन्धमें निर्मित हो चुका था उस सीमा तक पहुँचानेमें कोई कोर-कसर नहीं रखी गई है।

कहानी साहित्य

भारतमें आनेके बाद सिन्धी भाषामें प्रचुर मात्रामें कहानियाँ लिखी गई हैं। अनूदित कहानियोंके अलावा भी २००–३०० मौलिक कहानियाँ उपलब्ध हैं। यहाँ अनूदित कहानियोंका वर्णन न करते हुए, मौलिक कहानीकारोंकी तालिका मात्र ही दी जा रही है।

इस कालके मौलिक कहानीकार इस प्रकार हैं —

सर्वश्री—आनन्द गोलाणी गुनु सामताणी सुगन आहूजा पोपटी हीरानन्दाणी कीरत बाबाणी जगत आडवाणी आसानन्द मामतोरा अमरलाल हिंगोराणी लछमन राजपाल गोबिन्द माल्ही तारा मीरचन्दाणी सुन्दरी उत्तमचन्दाणी मोती प्रकाश कृष्ण राही ईश्वर आँचल किशोर पकुवा उत्तमु चेतनु मारीवाला बासु तालिबु गुल आसिनाणी मुरली मुघी नारायण भभाणी आत्माराम लालवाणी फतनु पुरसवाणी नारायणु भारती कला प्रकाश मोहन कल्पना किशिन खटवाणी मनोहरलाल राम पंजवाणी लोकनाथ जेटली हरीकान्त आदि सिन्धी साहित्यके मौलिक कहानीकारोंके रूपमें प्रसिद्ध हैं।

आजकी सिन्धीकी कहानी अपना साहित्यिक रूप समीचीनता और सुन्दरताके ग्रहण कर रही है। भावोंके अनुरूप भाषा भी बनती जा रही है। आजका कहानीकार भाव तथा कला पक्षमें सामञ्जस्य लानेमें सतर्क है। कई नए कहानीकार जो विभाजनके बाद हिन्दीकी गोदमें पले हैं और अपने पुराने कहानीकारोंके चरण चिह्नोंपर चलकर हिन्दी शब्दोंके साथ फारसी शब्द भी ग्रहण करते हैं उनकी भाषा कुछ कमजोर रह जाती है। उधर फारसी तथा अरबी शब्दोंके प्रयोग करनेकी लहर-सी चल पड़ी है और पुराना साहित्यकार ऐसे ही कहानीकारोंको दाद देता है जिससे [illegible] मन भय नए लेखक सहम-सहमकर इस क्षेत्रमें पदार्पण करनेका साहस करते हैं। यह प्रसन्नताकी बात है कि आज इस क्षेत्रमें बहनें भी उतर आई हैं इतना ही नहीं कहीं-कहीं पति-पत्निने भी साहित्य-सृजनमें अपना योग दिया है। सिन्धीकी कहानी भी जीवनके निकटतर आ रही है। लेखक विविध विषयोंपर लेखनी उठा रहे हैं। सामाजिक राजनैतिक अन्तर्राष्ट्रीय स्वदेश-प्रेम प्रगतिवाद आदि अनेक विषयोंपर सुन्दर रचनाएँ हो रही हैं। सिन्धसे भारतमें आनेके बाद कैम्पों अथवा

अन्य स्थानोंपर सिन्धी लोग जिन कष्टोंमें गुजर रहे अथवा अपनी सिन्धकी स्मृतिमें जिन लेखकोंने कहानियाँ लिखी हैं, उनमें १—'गामिड़ो' २—'सिन्धुडीअ जा गल गोप कमलानि' ३—'सिन्धू' आदि कहानियोंके लेखक भी आनन्द गोलाणी प्रधान हैं।

अन्य मुख्य कहानीकार और उनकी कहानियोंकी सूची इस प्रकार है —

कीरत बाबाणी—१ तूं पुछी थो त मा उदासु छा आहियां? २ सुची ३ मता जा मुल ४ बम्बई आमची ५ वर्ई जो दिलिमें समाइजी न सघ्यो ६ हुन ७ सिमकीस जो बाप ७ नएं जग जा वमावार ८ महमद रामु आदि।

मोहिन्द आम्ही—१ अपिनें करमु २ मामिक जा जनाजो बा ३ पाप जो बही ४ मानाणी मजिम्म ५ दिल जी दुन्या आदि।

लोकनाथ जेटले—१ मामवी इन्सान २ पैरस मल ३ सहिणु ४ माझी ड्राईवर ५ तीर्थमाला।

नारायण भारती—१ कमम २ दस्तावेज बरी गम न अपि भवे।

कुछ ऐसे भी कहानिकार हैं जो इस क्षेत्रमें मिल-जुलकर आगे बढ़ रहे हैं उनमेंसे मुख्य इस प्रकार हैं —

सुन्दरी उत्तमचन्दाणी और उनके पति भी उत्तम—१ सिन्धुअ जा मधु, २ ममता ३ तूफान जो पोइ ४ सभी मुंहें स्कूल ठहिराए ५ ५ कोसानु ६ बगगु ७ कश्मीरी साड़ी ८ माइक हम आदि।

भी उत्तमु—१ जीवन साथी २ बचन जो बलिहारी ३ धाकधाकट।

कला प्रकाशु—१ ऐबर २ अभी जिरह माह ३ सरत जा पुन ४ मिष्पन धमांके मीनेमें माह ५ मारमा आदि।

तारा मीरचन्दाणी—१ ओमु ऐं होगु, २ दीवार, ३ पर हुन आया ४ महकार।

पोपटी हीरानन्दाणी—रंगीन जमाने में गमगीन कहाण्यूं।

रामु पंजवाणी—साह मूं कहाण्यूं।

चेतनु माडीवाला—सिन्धी जीवन कहाण्यूं।

नाटक

भारतमें आकर सिन्धी साहित्यकारोंने नाटककी ओर कम ध्यान दिया है। न केवल मौलिक नाटक ही कम लिखे हैं बल्कि अनुवाद भी कम ही किए हैं। श्री यू. गम मल्कानी जो नाटककार हैं उन्होंने भी इस ओर कम ध्यान दिया है। यहाँ मौलिक नाटककारोंके नाम तथा रचनाओंकी सूची प्रस्तुत की जाती है —

राम पंजवाणी— सिन्धु जा मन माटिक और पूरब वारी।

राम लालित— गुमी जा नमक और सिन्दरी ऐं मेंड़ो।

चेतन मुरदाणी— इन्साफ।

कृष्ण राही— मालो ।
किशोर पहुजा— रोहु कौंहिबो ।
सुगिनचन्द मधुदास— जीवन एँ कला ।
पोपटी हीरानन्दाणी— बाभोज फरियादु ।

उपन्यास

विभाजनके बाद भारतमें आनेपर कहानीकी तरह उपन्यासोंका भी अनुवाद आरम्भ हो गया। श्री जगत आडवाणीने अपनी " कहानी मासिक पत्रिकाका नाम बदलकर कहानी नाविल माला" रखा और प्रतिवर्ष छह सुन्दर अनूदित उपन्यास प्रकाशित होने लगे।

उपन्यासोंके लिए निम्नलिखित प्रकाशन गृहोंने बड़ी लगनके साथ काम किया —

बिहारी छाबड़ियाने— बन्धन साहित्य माला "।

चेठानन्द लालवाणीने हैदराबादसे निकलनेवाली " भारत जीवन माला " का पुनर्मुद्रण शुरू किया।

इस दिशामें " हिन्दुस्तान किताब घर " वालोंने सबसे बड़ा योग दिया।

इसके अलावा पूना अजमेर, जयपुर तथा दिल्ली आदिमें भी कुछ प्रकाशन गृह स्थापित हुए हैं जो इस दिशामें बड़ी सतर्कतासे काम कर रहे हैं।

यहाँ मैं अनूदित पुस्तकोंका वर्जन कर मौलिक ग्रन्थोंके बारेमें ही लिखूँगा। अनूदित उपन्यासोंके बारेमें इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि भारतके मुख्य-मुख्य उपन्यासकारों—रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरत्चन्द्र मुन्शी प्रेमचन्द शंकर बनर्जी आदिके उपन्यास तथा रूस इंग्लैण्ड और फ्रान्सीसी उपन्यासकारोंकी मुख्य मुख्य रचनाएँ सिन्धी भाषामें अनूदित हो चुकी हैं। अब भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें जाकर बसनेवाले सिन्धी लेखकोंने उन प्रान्तोंकी विशेष रचनाओंकी ओर भी ध्यान दिया है और धीरे-धीरे उन रचनाओंका अनुवाद हो रहा है।

भारतमें आनेके बाद कुमारी तारा मीरचन्दाणीने कूमायल कली नामक पहला मौलिक उपन्यास लिखा।

१९५२ से ही मौलिक उपन्यासोंका दौर आरम्भ हो गया। श्री गोविन्द माल्ही जो पहले कहानीकार थे वे अब उपन्यासकार बन गए और आज श्रेष्ठ उपन्यासकारोंकी कोटिमें आपकी गणना होती है। श्री गोविन्द माल्हीके कुछ उपन्यास हिन्दीमें भी अनूदित हो चुके हैं। इस वर्ष ही इन्होंने १–'आनू' २– जिन्दगीअ जे राह ते और ३– जीवन साथी नामक तीन उपन्यास लिखे हैं।

इसी वर्ष श्री राम पंजवाणीने जिन्दगी या मौतु नामक उपन्यास लिखा है।

१९५३ में श्री गोविन्द माल्हीने मन जो मीतु तथा पखी बड़ा बलर वां विछुड़िया नामक दो उपन्यास लिखे।

सुन्दरी उत्तमचन्दानीका किरन्दड़ दीवारूं नामक पहला उपन्यास निकला था।

इस उपन्यासके कारण श्रीमती सुन्दरी उत्तमचन्दानीने उपन्यास-जगत्में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है और यह कहनेमें कोई अत्युक्ति न होगी कि सुन्दरी भाव भाषा और कला आदि विचारसे इस क्षेत्रमें अनुपम हैं। यद्यपि श्री गोविन्द माल्ही श्रेष्ठतम उपन्यासकार हैं फिर भी सुन्दरीका स्थान विशिष्ट ही है। इसका प्रमाण यह है कि डेढ़ वर्षके अन्दर इस उपन्यासके दो संस्करण निकल चुके हैं। इस वर्षका अन्तिम उपन्यास श्री शिवो रामचानी द्वारा लिखित गुमान था जिसे "भारत जीवन" वालोंने प्रकाशित किया।

१९५४ में पूरे ८ मौलिक उपन्यास निकले। स्थानाभावसे यहां केवल उपन्यासकारोंके नाम तथा रचनाओंकी सूची ही प्रस्तुत की जाती है —

लेखक	उपन्यास	प्रकाशन गृह
१ गोविन्द माल्ही	तलवार	रायी प्रकाशन गृह
२ गोविन्द माल्ही	चंचल निगाहूं	भारत जीवन गृह
३ मोती प्रकाश	अन्धारा उजाला	रिमझिम गृह
४ आनन्द गोलानी	मन्नू	कहानी गृह
५ बासु तालिब	चीत	नरगस गृह
६ मोहन कल्पना	'लमन	भारत गृह
७ मोहन कल्पना	आवारा	भारत गृह
८ मनूलाल पयमिहानी	मुँहिंजी धारी	भारत गृह

इसके अलावा "नीरज साहित्य माला" तथा "प्रभात साहित्य माला" द्वारा प्रकाशित ब किनारा और मोहन कल्पना द्वारा रचित रात बाकी आहे और जिप्सी नामक दो मौलिक उपन्यास निकल चुके हैं।

प्रकाशन गृहोंके अलावा कई साप्ताहिक और मौलिक पत्रिकाओंमें बड़े ही सुन्दर निबन्ध छपे हैं यदि उनका संकलन किया जाए तो कई निबन्ध ग्रन्थ तैयार हो सकते हैं। ऐसी पत्रिकाओंमें "हिन्दवासी" साप्ताहिक मुख्य है। इसकी १२००० प्रतियां छपती हैं। नई दुनिया नामक एक और साप्ताहिक है।

लोक गीत

लोक-गीतोंके संग्रह करनेमें श्री नारायण भारती मुख्य प्रयत्न कर रहे हैं। उनके लोक-गीत अभी पत्र-पत्रिकाओंमें ही छप रहे हैं, पुस्तक-रूपमें अभी तक नहीं छप सके हैं।

फुटकर-साहित्य

बम्बईसे निकलनेवाले हिन्दुस्तान दैनिक पत्रके ट्रस्टियों की ओरसे हिन्दुस्तान साहित्य माला का पाँच-छह वर्षोंसे प्रकाशन हो रहा है। इस मालाके द्वारा विभिन्न विषयोंपर सुन्दर पुस्तकें छप रही हैं।

अजमेरकी 'सिन्ध पब्लिकेशन सोसाइटी' तथा 'सुन्दर साहित्य' वालोंने सरकार द्वारा प्राप्त सहायतासे एक नई योजना तैयार की है, जिसके द्वारा अरबी सिन्धी तथा देवनागरी लिपिमें शीघ्र ही पुस्तकें छपकर प्रकाशित होंगी। सबसे मुख्य प्रकाशन है हिन्दी-अंग्रेजी-सिन्धी कोष (देवनागरी लिपिमें) इसके सम्पादक हैं धर्मश्री दीपचन्दजी देवदत्तजी तथा प्रभुदासजी ब्रह्मचारी। यह कोष शीघ्र ही प्रकाशित होकर जनताके सामने आनेवाला है।

बाल-साहित्य

भारतके विभिन्न स्थानोंसे बाल-साहित्य प्रकाशित हो रहा है। श्री गोवर्धन महबूबाणी भारती" को मास्यूं नामक सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित संगीत ग्रन्थपर १००) रुपएका सरकार द्वारा पुरस्कार मिल चुका है। श्री फतहचन्द वासवाणीको भी भारत दर्शन पर १०) रुपएका पुरस्कार सरकार द्वारा मिल चुका है। इसके अलावा भी दोनों कवियोंने बच्चोंके लिए बड़े ही सुन्दर गीत लिखे हैं। अजमेरकी बालकनजी बारी से फुलवाड़ी नामक मासिक पत्रिका देवनागरी लिपिमें प्रकाशित होती है।

देवनागरी लिपिमें सिन्धी पुस्तकें

अजमेरकी "सिन्ध पब्लिकेशन सोसाइटी' द्वारा विभिन्न कक्षाओंके लिए विभिन्न विषयोंपर पाठ्य पुस्तकें छप चुकी हैं। 'भारत दर्शन' का देवनागरीमें लिखित संस्करण छप रहा है। बम्बईकी "हिन्दुस्तान साहित्य माला" तथा खार स्थित "कमला हाईस्कूल" द्वारा कई पुस्तकें छप चुकी हैं। सबसे बड़ी प्रसन्नताकी बात यह है कि दिल्ली यूनीवर्सिटी की ओरसे आठ पुस्तकें देवनागरी लिपिमें छप रही हैं।

यह हमारे साहित्यकारोंके लिए बड़े गर्वकी बात है कि उनके कुछ ग्रन्थोंका अनुवाद हिन्दी गुजराती मराठी तथा अंग्रेजीमें भी हो चुका है। उनमें मुख्य ग्रन्थकार हैं —धर्मश्री सुन्दरी उत्तमचन्दाणी उत्तम कीरतु बाबाणी गोविन्द माल्ही गोविन्द पंजाबी सुगनु आहूजा तथा गोवर्धन "भारती"। इनके अलावा एक-दो लेखकोंके ग्रन्थ पाकिस्तान वालोंने उर्दूमें भी प्रकाशित कराये हैं।

भारत सरकारका सहयोग

कई विद्वानोंकी पुस्तकें भारत सरकार नैशनल बुक ट्रस्ट तथा अकादमी द्वारा प्रकाशित तथा पुरस्कृत हो चुकी हैं। ५०००) रु का सबसे बड़ा पुरस्कार श्री तीर्थ बसन्तको प्राप्त हुआ है तथा ५ ०) रु का पुरस्कार श्री गोवर्धन महबूबाणी श्री फतहचन्द वासवाणी तथा श्री परसराम 'जिया' को मिल चुका है।

सिन्धी-साहित्य-सम्मेलन

भारतमें आनेके बाद सिन्धी-साहित्य-सम्मेलनकी स्थापना हुई है। यद्यपि सम्वत् २००० में हैदराबादमें विराट सम्मेलनके अवसरपर सिन्धी-साहित्य-सम्मेलन श्री जयरामदासजीके सभापतित्वमें हुआ था फिर भी भारत ही इसका उद्गम-स्थान माना जाएगा। इसके अधिवेशन बम्बई, दिल्ली नागपुर, गांधीधाम और भोपाल आदिमें क्रमशः सर्वश्री जयरामदास दौलतराम प्रोफेसर नारायणदास मल्कानी प्रो यू एम मल्कानी प्रो लालसिंह अजवाणी आदिकी अध्यक्षतामें हो चुके हैं।

पाकिस्तानमें साहित्य-सृजन

विभाजनके बाद सिन्ध (पाकिस्तान) में भी साहित्यकी सर्वतोमुखी उन्नति हुई है। सिन्धी-अदबी-सोसाइटीने बिना किसी भेदभावके हिन्दुओं द्वारा लिखित अप्राप्य पुस्तकोंका जीर्णोद्धार किया है अर्थात् उन्हें नए सिरेसे प्रकाशित कराया है। सिन्धी-अदबी-बोर्डके अलावा मुस्लिम अदबी-सोसाइटी भी इस दिशामें काम कर रही है। अन्य मासिक पत्रिकाओंके अलावा महराण और नई जिन्दगी नामक त्रैमासिक पत्रिकाएँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

यह स्वीकार करनेमें कोई अत्युक्ति न होगी कि जितना साहित्य सिन्धमें पिछली शताब्दीमें प्रकाशित नहीं हो सका उतना साहित्य यहाँ १५ वर्षोंके अन्दर सिन्धी विद्वानोंने प्रकाशित कराया है। प्रमाणस्वरूप १९६६ के नवम्बरमें दिल्लीमें साहित्य अकादमीने सरकार द्वारा स्वीकृत १४ भाषाओंके साहित्यका प्रदर्शन किया था उसमें एक स्टाल सिन्धी भाषाकी पुस्तकोंका भी था जिसमें विभिन्न विषयोंपर चुनी हुई ८५ पुस्तकें रखी हुई थीं। यदि पूरी तौरसे छान-बीन की जाए, तो विदित होगा कि पाँच छः हजारसे ज्यादा पुस्तकें सिन्धी भाषामें छप चुकी हैं।

इस प्रकारसे हम देखते हैं कि आज सिन्धी-साहित्य दिनोंदिन विकासोन्मुख ही है। आज ऐसे अनेक लेखक सिन्धी भाषामें सामने आ रहे हैं जिनसे हमें निकट भविष्यमें कुछ अभूतपूर्व साहित्यके उपलब्धिकी आशा है।

• • •

किशिनचन्द 'बेवसि'

[कवि-परिचय]

किशिनचन्द 'बेवसि'

• • •

सिन्धी काव्य-जगत्‌में सूफ़ी सन्तों तथा वेदान्ती साधुओंकी काव्य-सुरसरिके प्रवाहित होनेके बाद वर्षों तक एक चुप्पी रही। बीच-बीचमें जो कवि हुए, वे पिटी-पिटाई बातोंकी ही अभिव्यञ्जना करते रहे। १० वीं शताब्दीके मध्यम कुछ कवियोंने भी कुछ लिखा वह उर्दू कवियोंकी नकल ही थी जिसमें इश्क-मिजाजी अथवा बाह्य सौन्दर्यकी ही भरमार थी।

बंग-भंग-आन्दोलनके कारण राष्ट्रीय सन्देश भारतके पश्चिमी अञ्चलके कोनेमें पड़े हुए सिन्ध तक भी पहुँच चुका था फलस्वरूप टोलाराम बालाणी तथा कनइचन्द विद्यार्थीके राष्ट्रीय गीतोंकी प्रतिध्वनि सुनाई पड़ी। फिर भी यह कहनेमें अत्युक्ति न होगी कि किशिनचन्द 'बेवसि' के काव्य-क्षेत्रमें पदार्पण करनेसे सिन्धी-काव्यमें नई चेतना आ गई। 'बेवसि' की भाषा इतनी शक्तिशालिनी तथा सौष्ठवपूर्ण है कि यदि इनका जन्म किसी स्वतन्त्र देशमें हुआ होता अथवा यों कहिए कि इनके निर्वाहके लिए सरकारी नौकरीसे अलग किसी स्वतन्त्र वृत्तिका सहारा होता तो इनकी भाषा वह आग उगलती जो सारे प्रान्तके नवयुवकोंमें एक नया जोश भर देती। ऐसे कविको जन्म देनेका सौभाग्य सिन्धको प्राप्त हुआ।

किशिनचन्द 'बेवसि' के पूर्वज मुल्तानसे आकर सिन्धमें बसे जहाँ लाड़काना नगरमें २५ फरवरी १८८५ ई॰ में किशिनचन्दजीका जन्म हुआ।

आप टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल (सिन्धी भाषामें) की पढ़ाई समाप्त कर अध्यापकके रूपमें सरकारी नौकरीमें प्रविष्ट हुए और अन्त तक सिन्धके गाँवोंमें अध्यापक रहकर आपने पेन्शन प्राप्त की।

बच्चोंसे प्रेम

बेवसि साँई ने यद्यपि अपने अन्तिम दस वर्षोंमें लिखना बन्द कर दिया था फिर भी वे बच्चोंको न भुला सके। इन अन्तिम वर्षोंमें इन्होंने बच्चोंके लिए बड़े ही शिक्षाप्रद गीत लिखे हैं। भला जिसकी सारी आयु बच्चोंके साथ व्यतीत हुई हो वह बच्चोंको कैसे भुला सकता था!

इनकी ये रचनाएँ थोरी थेर में छपी हैं जिसे सरकारने उसे पाठ्य पुस्तकके रूपमें स्वीकृत किया था। बिरादरी नामक कवितामें ये बच्चों द्वारा कहलवाते हैं —

असीं बालक साहबु तुंहिजा पिता परमात्मा बाला,
निराल्यूं से बिपूं बोल्यूं निराला प्यार बानी बाबा
रंगनि बोल्युनि ऐं कौमियत जो असां में छो प्यो छाला ?
हकीकतमें असीं भाउर पिता हिकुई असीं ताला।

[हे परमात्मा! हम तुम्हारे ही बालक हैं। भले ही निराली भाषाएँ हों निराली रहन-सहन और खान-पान हो लेकिन इन वर्णों भाषाओं और जातियोंके कारण हममें भेद किसलिए? वास्तवमें हम सब भाई-भाई हैं और एक ही प्रभु हमारा पिता है।]

ये आगे लिखते हैं —

जाति वरन रंग रूप जो साईंअ वटि ना फेर,
हू हुब हरकंहि सां रखे रखे न कंहि सां वैर।

[प्रभुके पास जाति वर्ण रंग तथा रूपका कोई भेद नहीं है। वे सबके साथ प्रेम ही रखते हैं उनके पास वैर या द्वेषका नाम तक नहीं है।]

सर्वस्व समर्पणका स्वप्न इन्होंने बहुत पहले देखा था। सन् १९२१-२६ में लिखी हुई सेकी नामक कवितामें आपने लिखा है —

विरहनि में वंहि जो सभई भासु धनु
न धनु आहि माखी त मेटा जे मनु
न मनु आहि मुबारकु त आर्पे जे तनु
न तनु आ तखानो त्यो त मिठिड़ी बचनु
अपरि की न की तोसे दियणो बवर
लिखा पर भले लाइ वियणो बवर।

[यदि तुम्हारे पास धन है, तो गरीबोंको बाँट दो यदि धन पर्याप्त नहीं है तो मनकी भेंट दो यदि मन ठीक नहीं है तो तन अर्पित करो और यदि तन भी स्वस्थ नहीं है तो मीठे वचन बोलो। लेकिन तुम्हें कुछ-न-कुछ देना जरूर है और परोपकारके लिए अवश्य ही अपनेको न्यौछावर करना है।]

स्वर्गवास

स्वर्गवास होनेसे १० वर्ष पहले वेकसि साहब ने एक प्रकारसे वानप्रस्थ ही ले लिया था। वे बाहर बहुत ही कम निकलते और घरपर रहकर ही अपना पैतृक व्यवसाय अर्थात् होम्योपैथी इलाज करते थे। यद्यपि इनके पिता होम्योपैथ न होकर यूनानी हकीम थे। फिर भी ऐसा कहनेमें अत्युक्ति नहीं होगी कि इलाज करना उनका पैतृक व्यवसाय था।

इन दस वर्षोंमें इन्होंने अपने इष्टदेव भगवान श्रीकृष्णमें खूब मन रमाया और दर्शन-शास्त्रका गहरा अध्ययन किया था।

उन दिनों प्रति रविवारको झाड़ महल्लेके किनारे बसे हुए बाग-बागमें श्रीमद् भगवद्गीता अथवा गुरुदेवकी साधना और गीताञ्जलि पर प्रवचन हुआ करते थे।

'वेकसि साहब'ने यद्यपि खुले आम राजनैतिक आन्दोलनमें भाग नहीं लिया फिर भी उनके हृदयमें स्वराज्य-प्राप्तिकी तड़प गहरी पैठी हुई थी।

स्वर्गवाससे पहले आप पाँच महीनेकी लम्बी अवधि तक बीमार रहे। सन्तोषका विषय यही रहा कि आपने अपनी मृत्युसे पहले भारतको स्वतन्त्र देख लिया। २१ दिसम्बर सन् १९४७ की शामको आप स्वर्गवासी हुए।

रचनाएँ —१ धड़्‌क वेकसि २ चीरी धड़्‌क ३ मौजी गीत (बच्चोंके लिए) ४ गुड़ मानव जीवन कविता।

कविने अपने विषयमें स्वयं इस प्रकार लिखा है —

मंज बाना पुप्‍पु मँदो बासि बोलन बासिते
माहि कु बिरत पो मिस्‍यस कामिल कबीसर स बर्जत।

[मुझ और अज्ञान निधियोंको विनय प्रकाश खोलनेके लिए प्रकृति महाकविके हाथमें मुझसी समर्पित करती है।]

इसी कथनके अनुसार वेकसि साहब अपने अन्तिम दिन भारतीय और सूफी ज्ञान-शास्त्रकी कई गुत्थियाँ सुलझानेमें व्यतीत किए, फलस्वरूप मामूँही मिर्‌ और संसा जूँ लरियूँ नामक कविताएँ प्रकाशमें आई। इनका वर्णन आगे किया जाएगा।

सिन्धके प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर लालसिंह अजवाणी लिखते हैं— 'अलिफ लैला' और 'चन्द्रकान्ता'के रोगसे निकले हुए मुमताजों और दम साजों ओल्डमन और अमीर हमजों तायमक मलूकों बहार दरवेशो अलावलियों और अंजुमन आराओं सब्ज परियों और मलकोंने एक तरफ दिमाग खराब किया था तो दूसरी तरफ ऐयारों और तिलस्मों तहखानों और गुप्त कमेटियों तथा बिजलीके नेजोंने दिलको डाँवाडोल कर दिया था उस समय बंकिम तथा बाबू शिव व्रतलालकी रचनाओंने मेरे लिए सञ्जीवनीका काम किया।

इसी प्रकार जब शमा और परवाना गुल और बुलबुल हुस्न यूसिफ और चश्म आहो जाम और साम माशूक और मियाम बहार और शराब आदि थोथी उपमा और अलंकारोंने बैत बाजी अनुप्रासों तथा बे माना रदीफों (छन्दों) ने मनको दुखी कर दिया था तब लाड़काणा निवासी एक गरीब अध्यापक श्री किशिन-चन्द तीर्थदास खत्री ने 'बेवस' नामसे मधुर गीतों सुन्दर भजनों और बुद्धिमत्ता पूर्ण सनकों (सामूंगी शिर्) द्वारा दूषित वायु मण्डलको शुद्ध किया और निराशामेंसे आशाकी झलक प्रकट की।

शाह साहबका प्रभाव

मैंने श्री 'बेवस साईं' की जीवनीमें लिखाया है कि आरम्भमें उनपर शाह अब्दुल लतीफ सचल तथा सामी आदि कवियोंका प्रभाव था वे स्वयं इस बातको इस प्रकार प्रकट करते हैं —

आहि हरकंहि बैत अंदरि परिव पस्टो प्रिति जी
हर लतीफी-लातिमें ता सेव तेरी झणकार आहि,
बागे-लाहूत मां मिली प्यो मुखे गुल जो को बरो,
थ्यो अबो 'बेवस' अकिलि जा हैरती हुशियार आहि।

[शाह अब्दुल लतीफके काव्यके बारेमें लिखते हैं कि—प्रत्येक दोहेमें प्रेमकी पुकार है और प्रत्येक लतीफी लाति (कलरव) मे प्रेमकी ही झनकार (मधुर गुञ्जार) उठती है। उस दिव्य उद्यानमें से मुझे भी फूलकी पखुरी मिल गई।]

उस फूलकी पखुरीका सौरभ उनकी 'जोति' 'सदार फुलिरा' 'हुस्न' 'मुंहं जी सुन्हा' आदि कई कविताओंमें मुखरित है।

'हुस्न' नामक गीतमें वे लिखते हैं —

सारो संसार थो सरिहरियो जे अल्या हुस्नु डिसे
बागु गुल, हार डिसे भंवर भी गुलहानि डिसे
मौज मौसुमि जा मर्यो मौज सां महिरानु डिसे

लाल, माणक रतन सोनु, रुपो जामि जिये
बाग़ी हर जिन्स वणी सूहं जे सरकार अर्पण
तावड़ हर दिलि जूं हदूं हुस्न जे सरकार अर्पण।

[सारा संसार सौन्दर्य रूपी पद्मिनीको दान दे रहा है बाग फूल मालाएँ तथा इनकी सुगन्ध अर्पित करता है समुद्र बड़े आनन्दपूर्वक मोतियोंकी झोलियाँ भर-भरकर देता है और खान देती है लाल माणक सोना चाँदी आदि। प्रत्येक वस्तु इस सौन्दर्यके सरदारके सामने अञ्जुलि भरकर आती है और इस हुस्नकी सरकारके आगे प्रत्येक हृदयकी सीमाएँ वशीभूत हैं।]

कवि निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा सत्यम (प्रभु) का आभास प्राप्त करता है —

जा मिजाज़ीअ जे गुले मुहिब संदी सूरत में,
सूंह 'बेवसि' सा हकीकीअ मड़ सभी कुदिरत में
का बि बीअ सूंह गुले चीज़ न थी फ़ितरत में
आयवा हुस्नु हकीकत जे सचा सूरत में
जो सभे मोरि की हवासिनि जे हुकूमत खां परे,
हुन हरि चीज़में दिलदार जो दीदार करे।

[जो आनन्द मिजाज़ी (बाह्य प्रेमी) को अपने प्रेमी (व्यक्तिगत) में आता है, वही आनन्द हकीकी (प्रभु-प्रेमी) सम्पूर्ण प्रकृतिमें अनुभव करता है उसे इस सृष्टिमें प्रभुकी सुन्दरताके अतिरिक्त किसी अन्य वस्तुका आभास नहीं होता। यदि कोई इन इन्द्रियोंके शासनसे मुक्त हो सके तो सत्य ही वह प्रत्येक वस्तुमें प्रियतमका दर्शन पा जाए।]

मानव जब तक इन्द्रियोंके वशीभूत है तब तक इन्द्रियातीत आनन्दके सुखका अनुभव नहीं कर सकता। मानव मायाके वशीभूत होकर सच्चिदानन्दका वह सत्य सत्यस्वरूप जो सर्वत्र तथा अनेक वस्तुओंके रूपोंमें एक ही परब्रह्मका रूप है अनुभव नहीं कर पाता। लेकिन प्रभु लीलामय है। उस तो नए-नए रंग रचाकर ही विविध और विचित्र लीलाओं द्वारा अपने प्रेमी (भक्त) को रिझाना आता है। 'बेवसि' सोई अपने जोगि नामक गीतमें लिखता है —

अपारी आदि खांपी जो बणी थे अंति रचिता तूं
थी बेरंग रचाईं रंगपुरि में रंग न्यारा थो।

[अनादि और अनन्त होनेपर भी तुम अपनी रचना (सृष्टि) द्वारा व्यक्त होते हो। बेरंगी (रंग-रूप रहित) होकर भी रंगपुर (व्यक्त सृष्टि) में नए-नए रंग रचाते हो।]

सिफाती भेस में साईं! यसी यो हुस्न जातिम के
रखे बहिहवत मंसा कसिरत करी केसा पसारा जो।

[ऐ स्वामी! सिफाती (रूप और कर्म) में तुम आप जाती हुस्न (अव्यक्त सौन्दर्य) का आनन्द लेते हो और एकत्वसे अनेकत्व की सृष्टिका कितना प्रसार करते हो!]

अरूपा! रूप मन्दर में जलाए प्रेम की अगिनी
विषय सह आप आहुती रची दिलि का हुमारा जो।

[हे प्रभु, आप निराकार होकर भी रूप मन्दिरमें प्रेमकी अग्नि जलाकर, अपनी आहुति डालनेके लिए हृदयके हारोंका निर्माण करते हो।]

भगवानको भी इस लीलाका आनन्द तभी प्राप्त होता है जब वह अपनी आहुति देता है।

इस लीलामयी सृष्टि द्वारा ही भगवान मनुष्यको अपना भेद अथवा रहस्य बतलाता है। यद्यपि उर्दूके किसी शायरने कहा भी है —

दे दिया सब कुछ मगर न अपना सुराग दिया।

[भगवानने सब कुछ देकर भी अपना भेद नहीं दिया।]

लेकिन 'बेकसि' इन्सान नामक गीतमें बतलाते हैं —

कह तूंहिये जो करे नूर सा जिस्म हो पैदा,
जो तुम्हें शौक न हो भेद बताइस को खियालु।

[ऐ मनुष्य! उसे यदि अपने भेद बतानेका विचार न होता तो वह तुम्हें अपनी रूह (आत्मा) से क्यों कर उत्पन्न करता? लेकिन वह भेद प्रेमके सिवाय प्राप्त हो नहीं सकता।]

तो मैं यमुना जरहि प्रेम भरी दिलि से भरी,
हो तर्राह प्यार करे लोलि मिलाइस को खियालु।

[तुमको भगवानने जब प्रेमपूर्ण हृदयसे भरा तब तुम्हें अपनेसे विमुक्त कर (छुटकारा) अपनेमें लीन करनेका विचार था क्योंकि] —

दबक धारी न हुले दिलि से हुकूमत कीजिये,
हो न ताकत सी को कुदरत से दबाइस को खियाल

[प्रेमके सिवा किसी अन्यका हृदयपर शासन हो नहीं सकता उस अपनी शक्ति द्वारा तुम्हें दबानेका विचार नहीं था।]

यदि भगवान तुमसे प्रेमकी अभिलाषा रखता है तो वह भी तुमपर ही अपना प्रेम केन्द्रित करता है —

तुहिंजे रचिना त रस्यो हुस्न खे छा पेसु कमाल
कोट तुहिंजे तै उस्यो प्रिति पचाइण को खियालु।

[तुम्हारे निर्माणपर ही सौन्दर्य पराकाष्ठा पर पहुँचा तुम्हारी सृष्टि द्वारा ही प्रभ अपने प्रेमको परिपक्वावस्थामें पहुँचानेका विचार करते थे।]

प्रकृति-चित्रण

यद्यपि बेवसि सौंहिंने प्रकृतिका खुलकर वर्णन नहीं किया है फिर भी जहाँ तहाँ उसके छींटे हृदयको प्रफुल्लित कर देते हैं। 'बेवसि' सौंहिंने प्रत्येक विषयपर अपनी रचनाएँ की हैं शायद ही कोई ऐसा विषय हो जो उनसे छूट पाया हो फिर भी इतना कहना पड़ेगा कि प्रत्येक विषय पर रचना करते हुए भी उनका बाहुल्य अथवा प्राचुर्य नहीं है। केवल उनकी मार्मिकता स्पर्श तक ही अपनी लेखनीको सीमित रखा है। अस्तु। उद्यानका वर्णन करते हुए वे लिखते हैं —

फुलवारि कुह माँ करी फूलनि जी धूम धाम
छा लाल लाल ते टिकिया गुल लालु मामु जामु
गैंडो, गुलाबु वीर खे दिये थाफिरवधुं इनामु
शबनम बताए शौक माँ, मोतियुनि मुठयुं मुदामु।

('बाग़ बहार')

[उद्यान पूर्ण यौवनमें फूल उठा फूलोंकी बाहर आ गई, प्रत्येक शाखापर लाल फूल खिल उठे गेन्दा और गुलाब वृष्टिको उपहार स्वरूप भाफियाँ प्रदान कर रहे हैं और हिमकण शौकसे मोतियोंकी मुट्ठीमें भर भरकर ला रहे हैं।]

लगी लाला खे लालाई चमक गैंडे गुलनि लाई,
बस्यो गुलजारि में आई, फकट को सोन सुर्नियुनि जो।
गुलाबो रंग जो प्याला पियो नर्गिस खे पै लाला
कलोर्यां मेघ मतवाला, अजबु इजहार अबरपुनि जो।

[लालामें लाली भर गई है, गेंदेमें चमक आ गई है। ऐसा मालूम होता है कि बगीचेमें स्वर्णकी बारिश हो उठी है।]

नया मोड़

श्री बेवसि और मुरी व कवियोंके बाद सम्भवतों बाग अरबी और फारसीकी नज्मों और मसनवियोंके प्रभावके कारण शायरीमें गेसूके सिलसिला और आबे कौसरकी तमाम थी। उन्हें सिन्धुकी सभ्यता तथा भनिलायाओंकी तनिक भी परवाह न थी। मगर श्री 'बेवसि' ने काव्य जगत्में नया मोड़ उपस्थित किया।

उनके काव्यका अध्ययन करनेसे पता चलता है कि वे फ़ारसी भाषा तथा छन्द-शास्त्रके अच्छे ज्ञाता थे। यद्यपि फ़ाइलातुन फ़ाइलातुनके बन्धनमें बन्धे रहे फिर भी उन नियमोंके न तो कैदी ही बने और न भिखारी ही। जब-जब भावावेशमें आते तो 'वज़्न' 'बहर' 'काफ़िया' और 'रदीफ़' आदि धरे ही रह जाते और वे भावों की नदीकी तरह तटोंको तोड़कर अग्रसर होते।

श्री बेबसि कहीं-कहीं 'गुल' और 'बुलबुल' को भी नहीं भूले मगर उन्हें भी उन्होंने नए ढंगसे ही प्रस्तुत किया —

छा कॅरी तसवीर ज़ति ज़िति लबु दिलि सप्यानु आसि,
बुलबुलुनि सॊ बागमें अज़ बब पुछो बे दसु आसि।

[यहाँ आखेटक बड़ा कठोर हृदय है वहाँ मुक्ति किस कामकी। आज उद्यानमें निश्चय ही बुलबुलोंके साथ अत्याचार है मगर उसी समझमें ही छिपते हैं।]—

क्रुम्भि लका दुनिया बे मुंई तॊ लाहि दुख दर्सी नकाबु
दुख दर्स लस दूर दुनिया, विलिसबा विलि प्रादि आहि
छा संदसि लसंबहु बेबसि माहु ता बा तॊ करे,
कर कुबा मांगिकमि लार कुवि सुवा आवालु आहि।

[प्रसन्नतापूर्ण संसारके मुखसे अवसादपूर्ण आवरणको हटा दो क्योंकि जो इसका दुःखरूपमें वर्णन करते हैं उनके लिए अप्सरा दुनिया प्रियतमा और प्रसन्न हृदया है।]

सचमुच ही 'बेबसि' ने निराशावादियों और संसारको दुःखपूर्ण माननेवालोंके लिए आशा और आनन्दका सन्देश दिया है। न मालूम क्या समझकर उन्होंने अपने लिए 'बेबस' का उपनाम चुना। वास्तवमें वे तो सबल आशावादी हैं। इन्सान नामक गीतमें आप लिखते हैं —

वा वि मारो न अटक आहि वो 'बेबसि' न बनी
आहि दुनियामें अगरि घूम मचाइण जो खियालु।

[यदि संसारमें धूम मचानेका तुम्हारा विचार है तो तुम्हारे सामने कोई बाधा टिक नहीं सकती। हाँ यदि अपनेको बेबस (विवश) न मानो।]

जीवनके बारेमें जो हमारी दुःखद भावनाएँ हैं उनका परित्याग करनेका परामर्श देते हुए जिन्दगी शीर्षकमें वे गुनगुनाते हैं —

ब किनारे बहिरु माहे तुर्दिही वाती जिन्दगी
जा मुझे फेरो कला थी ता लिकाली जिन्दगी।

[तुम्हारा अमर जीवन बिना किनारोंका सागर है जिसका तू बुलबुला और नायबान मानकर बैठा है, यह सचमुच सत्य स्वरूप और अमर है!]

मूँहमें दबिथी वि बिर्ज हो बन्म बिगु सानिमु मुबाए,
तो बगी मितिर्पंत सते अन्दरि मुम्नासी जिबगी॥
[पृथ्वीके भीतर दबकर भी बीज मुक्त और सजग था लेकिन तुमने केवल निभृत कोषेमें ही जीवन पहचाना।]

बन्द जिस्मानी मुकाए मर्य झवे तै उरे
मी रसे आजादु भी क्य शा न छाती जिन्दगी।
[जिस समय शारीरिक काराको काटकर यह जीवन आकाशमें उड़ता है, तो स्वतन्त्र होनेपर क्या-क्या नहीं कर पाता!]

बेकसि जीवनको शाश्वत मानते हैं और साथ-साथ पुनर्जन्मके प्रति भी आस्थावान हैं —
हरि हयाती मर्कजी गुल हार हस्तीअ में बनी
नाहि हीस हिकिनी बकस्ति हासम, हयाती जिन्दगी।
[अस्तित्वकी मालामें प्रत्येक जीवन-पुष्प केन्द्रीय स्थान ग्रहण करता है, यह प्रस्तुत जीवन ही केवल एक जीवन नहीं है।]

मृत्युको भी वे जीवनका एक परिवर्तित रूप ही मानते हैं —
न हुम हा नेस्तीअ ऐं नाहि में अंजामु मौतु
हर दुनियामें न प्ये हा हिन तरहि सां आमु मौतु,
जिन्दगीअ के शाम लइ प्यो रातिं बो आरामु मौतु
बो अमरता बो मुणाए मुबुह सां पैगामु मौतु
जिर्द करीमी रोज़ रोशनु नितु नवाईअ वा नमीं
राति वे पर्दे ले चीरींदो मचे सूरिजु संमीं।

(मौतु)
[यदि मृत्युका अन्तिम रूप नश्वरता और शान्तिमें ही होता तो संसारमें मृत्यु इस प्रकार साधारण न होती। जीवन-सन्ध्याके लिए रात्रिमें ही मृत्यु रूपी विश्राम है और प्रभात ही अमरत्वका सन्देश देता है। सदा सर्वदा प्रभापूर्ण यह प्राचीनतम और नित्य नूतनतम भी नूतन सूर्य जिस प्रकार रात्रिके परदेको चीरता हुआ बाहर निकलता है।]

सोई बेकसि मृत्युमें भी प्रसन्नता ही अनुभव करते हैं —
मौत बो सुहिणो मलाइकु आहि रहिमत बे समानि
बदि मुलाईम ऐं मुराइप तै बफा करिही बमान
दुहन तासीअ बांकु हासीअ बे मुनाए अमुमानु,

पुष्प पेशानीअ ते मामे नव निआफ़त जो निशानु
उमिरि जे चहिरे तां, बेवसि घुंज जो मेटे करे,
गेडु वधि अहमाल जी वेसरि तां जो रेटे छदे।

[प्रसाद पूर्ण है यह मृत्यु रूपी सुन्दर देवदूत जो कुरूपता और बुढ़ापेपर कठोर धनुष ताने हुए है जो वय भारसे झुकी हुई प्राचीनता और दुर्बलताको निश्चय ही भुला देता है जो आयुके चेहरेसे पोपलापन मिटाकर, पुष्प रूपी रूपपर लावण्यके चिह्न प्रकट करता है और साथ-साथ विस्मृति द्वारा सद् कर्मोंको मिटा देता है।]

नवीनताके उपासक

हृदयसे प्राचीनताके पुजारी तथा दार्शनिक मनसे कृष्णोपासक कर्म द्वारा नवीनताके साथ सामञ्जस्य स्थापित करनेवाले बेवसि पिछड़ी हुई भारत-सन्तानको नवयुगकी नवीनताके साथ अग्रसर होनेका सन्देश देनेमें वे कभी नहीं झिझके बल्कि इसमें ही उन्नतिके साधनोंका सन्धान करते हुए नवाई नीतमें उन्होंने लिखा है —

त्रा दुनिया सो जो नमूने में नओं घाटु घड़े,
जो क़िदामीअ में नवरि पर्त पुराणाई पवे।

[वही कला है, जो नमूनेमें नया गठन गढ़ डाले तथा उसकी बानी तो नवीन हो लेकिन उसमें प्राचीनताकी पुट हो।]

कवि इस बारेमें इतना आगे बढ़ गया है कि वह सौन्दर्यको भी नवीनताका मुखापेक्षी मानता है —

जे न हरि शइ ते हुजी छाप नवाई पहिंजी
हुस्न जोखे में दिसे हुब नवाई पंहिंजी।

[ऐ नवीनता! यदि तू प्रत्येक वस्तुपर अपनी छाप नहीं लगाती तो सौन्दर्य भी अपने महत्वकी विपत्तिमें पड़ा हुआ पाता।]

वे आगे लिखते हैं —

डींहु जो रोज़ दिए पिरिह खां पैग़ामु नवीनु
जो नवाई न खां नओं आहुं, फ़साना खां क़दीमु
रचिना मुंहिंजी न वधे त न मढ़े सो हकीमु
धूं खां नद जी न हुजे तहिंजी जी हालति थी लकीमु
जी दुनियांई नवाईअ जो न करे, खां फिरे,
तंहिंजी तक़दीर खड़ी चोट ते 'बेवसि' थी फिरे।

[प्रातःकाल होते ही दिन — नित्य प्रति हमें एक महान् सन्देश देता रहता है— मैं नवीनसे भी नवीनतम तथा प्राचीनसे भी प्राचीनतम हूँ वह विद्वान अथवा ज्ञानी नहीं जिसने मेरे इस रहस्यको न समझा और जो मेरे साथ नहीं चलता उसकी दशा बड़ी दयनीय हो जाती है। कलाकार होकर यदि नवीनताके आगमनमें आनन्दित नहीं होता तो उसका भाग्य चरम सीमापर पहुँचकर भी गिर जाता है।']

गाँधीवादका प्रभाव

विश्ववन्द्य बापू रूपी सूर्यके भारतीय आकाशपर उदित होते ही प्रत्येक वस्तु तथा भावनाएँ उनके भावोंसे अनुप्राणित हो उठीं। ऐसी अवस्थामें सरीखे सिन्धके भावुक कवि भला कैसे अछूते रह सकते थे! माँ भारतीके इस भावुक पुत्रकी लेखनी भी उन्मुक्त होकर काव्य-जगत्में विचरने लगी और सिन्धी कवियोंके लिए उसने एक नया पथ प्रशस्त किया।

किसी समय जॉर्ज पञ्चमके राज्याभिषेकपर तथा १९१४ के विश्व-युद्धमें अँग्रेजोंकी सहायतामें गीत लिखनेवाले आज राष्ट्रीयताके अमर गायक हो उठे और साथ-साथ इसी पावन गंगामें आचमन कर ओजपूर्ण भाषामें रचना करनेवाले कई नए कवियोंको उन्होंने जन्म दिया —

जे उम्हस हुई कफन में गैर हिन्दी तन्दु का
त्रानु मरिणे खैदि बेवसि थी प्रयी परिष्याहचो।

[यदि मेरे कफनमें एक भी अहिन्दी तन्तु होगा तो मरनेके बाद मेरी आत्मा दुःखित होकर तरसती जाएगी।]

उनके पट्टशिष्य श्री हूँदराज 'दुखायल' गुनगुना उठे —
प्राणु मुंहिजो धाके, कढे आजादु हिन्दुस्तान में
प्यो न मल मुंहिजो मरणु गुलामीअ हिन्दुस्तानमें

[मेरी प्राण स्वतन्त्र भारतमें ही उठें और प्रभु ऐसी कृपा करें कि मेरी मृत्यु दुःखी और वैभवहीन भारतमें न हो!]

और वास्तवमें स्वतन्त्र भारतमें मृत्यु होनेकी श्री बेवसि जी की इच्छा पूर्ण हुई।

गांधीजीकी प्रत्येक विचार धाराको लेकर उनकी रचनाएँ हुईं। 'किसान' 'मजदूर' 'अछूतोंके सम्मान' 'गरीबकी झोपड़ी' 'किसान हृदय' 'स्वतन्त्रता' 'नारी' 'नवीनता' 'साबरमतीका सन्त' आदि कविताओं द्वारा हमें गांधीजीकी विचारधाराका आभास मिलता है।

जिस समय वे लिखते हैं प्रभा! मुखे न गाल्ह गरीबनि जी लुटिणी (हे प्रभु! इन गरीबोंकी आहोंको आँच तक न आने देना!) उस समय उनका

सहानुभूतिपूर्ण और गरीबोंके दुखमें दुखी हृदय सिमटकर उनकी झोपड़ियोंमें समाया हुआ दृष्टिगोचर होता है।

गाँधीजी अभी वर्धा या सेवाग्राम तक नहीं पहुँच पाये थे और साबरमतीमें ही उनके आन्दोलनोंकी हवा फैल रही थी उस समय ही अपनी अन्तर्दृष्टिसे कवि गाँधीजीकी शक्तिको भाँप गए थे और उनको इंगित कर कविने लिखा है —

पहिंजा गाँधी ज़ो इशारो करि संभाले प्यार सां
आहि तुंहिंजो ही इशारो खालिस ग़ैबी ज़ोर सां
जे हुजे थो हुकुम हैकर कंहिं मुवाफ़िक तौर सां
हिन्दु सागर ऐं हिमालय टकिरंदा यक ज़ोर सां
हिन इशारे ते विसारिन ग़म् अज अख्यूं छहठि किरोड़,
हिन इशारे ते उथनि बांहूं सज्यूं छहठि किरोड़।

[ऐ गाँधीजी! बड़ी सावधानीके साथ अपनी उँगलीका इशारा करो क्योंकि तुम्हारा यह इशारा ईश्वरीय शक्ति द्वारा प्रेरित है यदि किसी भी तरह तुम्हारी यह आज्ञा प्रचारित हो तो हिन्दसागर और हिमालय बड़े जोरसे टकरा उठेंगे। तुम्हारे इस इशारेकी ओर आज छियासठ करोड़ आँखें उठी हुई हैं और इस इशारेपर छियासठ करोड़ भुजाएँ ऊपरको उठेंगी।]

श्री बेवसि जी का गाँधीजीमें इतना विश्वास था कि बापूजी साबरमतीमें ही थे कि उन्हें निश्चय हो गया था कि यदि भारत माता को स्वतन्त्रता का मुकुट पहनाएँगे तो बापूजी ही —

ताजु आज़ादी जो भारत रखणु तुंहिंजे हथां
आहि हिन्दुस्तान खे अज नाज़ लंगोटीअ मथां

[भारत आज तुम्हारे ही हाथों स्वतन्त्रताका मुकुट धारण करना चाहता है, उसे इस लँगोटीवालेपर बड़ा गर्व है!]

उस समय इनकी रचनाओंमें स्वदेश-भक्ति और राष्ट्रीयताकी झलक दिखाई पड़ती है। उन्होंने मजदूरके श्रमकी सराहना की —

शक्ती आज नि सां तुंहिंजे ज़ोर जी पाए वाधु,
थी पले रत में रवां ऐं ख़ून ते तुंहिंजे वरोधु।

[तुम्हारी इन अरद मुजाओंके कारण ही निर्बलमें शक्ति आती है और तुम्हारे ही खून पसीने और शरीफ (शरीर) पोषित होती है।]

मालिकाणे चौकिड़े में पीड़िजणु केसीं रखा?
कीहूं विलि ते ओड़ अंदरि पीड़िजणु कसीं रखा?

[ऐ मजदूर! इस स्वामित्वके कोल्हूमें पेरा जाना और उसी तरह अपने ही हृदयकी पीड़ासे पीड़ित होना कहाँ तक उचित है?]

वे मजदूरिनको लक्षित करते हुए कहते हैं —

तुं पाहन छोई चो रस्तनि का पें रावी चो टकर,
बी हमालिनि बाक छोइन लइ रही मिनु मुन्तजिर,
हुस्न के हालति में अगिर्जी बनि निगाहुनि की नि निशानु,
पर रखी बेदागु दामनु अर्श के अस्मत समानु

[तुम रास्तोंके पत्थर तोड़ती हो और पहाड़ काटती हो और मजदूरिन बनकर भार उठानेके लिए उत्कण्ठित रहती हो। सुन्दर रूपवाली होनेकी अवस्थामें यद्यपि तुम कुदृष्टियोंका शिकार बनती हो फिर भी स्वर्गके सतीत्वके समान तुम अपने आँचलको निष्कलंक रखती हो (यह क्या कम गौरवकी बात है!)]

तीस वर्ष पहले जब सर्वोदयकी गंध नहीं उठी थी तब कविकी हृतन्त्री झंकृत हो उठी थी —

करि दुन्यामें दिलि कवेरी—तूं बि रहु मां भी रहां
कासि मन चुतीम में फेरो—तूं बि रहु मां भी रहां

[इस संसारमें अपने हृदयको विशाल बनाओ और अपनी मनोवृत्ति बदल दो जिससे तुम भी रहो और मैं भी रहूँ।]

पीहिंजे शाही महल मां पटि बे करि हिक कोठिड़ी
बे असे मूं जहिड़े लइ पचन्दी ठही सौ झूंपिड़ी।
करि तमन्ना घटि तिकेरी—तूं बि रहु मां भी रहा।

[यदि तू अपने विशाल प्रासादसे एक कमरा भी खाली कर देगा तो मेरे जैसे निराश्रितके लिए सुन्दर झोपड़ी बन जाएगी। अतः अपनी तीव्र इच्छाको सीमित करो जिससे तुम भी रहो और मैं भी रहूँ।]

साहूकारको फटकार बतलाते हुए कवि कहता है —

आहि तोरि जामाने इमारत कींहूंजे अर्शि आकाशि मां?
साजु राहत जो वजे थी कींहूंजे तम्बुनि तान मां?
कींहं बणो तो नर अंजे वे मुफ्तु धाक मालिदार?
आहि सा पाकि न गरीबो घामे आमत जो शिकार।

[ए धनवान्! तुम्हारा यह विलासपूर्ण भोजन किसके घामसे नयनोंमें भीगा हुआ है और यह आनन्दकी तन्त्री किसकी तान तननन बज रही है और किसने तुम-जैसे नर अस्त्रको मुफ्तखोर और वैभवशाली बनाया? इसके उत्तरमें वे लिखते हैं— यह शुद्ध अकिंचनता है, जो पीड़ापूर्ण पीड़ाका शिकार बनी हुई है!]

फाहिशी इशरत जे आदत सां बख़्शियइ हरि विकार
तुंहिंजे टहिकनि ते हज़ारें चश्म आहिनि अश्क बार।

[पापपूर्ण विलासी स्वभावके कारण तुमने प्रत्येक विकारको प्रोत्साहित किया है। तुम्हारी इन ठहाकोंसे भरी हुई हँसीसे सहस्रों आँखें अश्रुपूर्ण हो उठती हैं।]

ये सब बातें 'बेवसि'जी ने उन दिनों लिखी थीं जब सिन्धी भाषामें प्रगतिवादकी बू तक न थी —

छो न थींदी जंगि जारी धर्म राजनि वास्ते?
जो खिलाफ़ी जंग लइ थो तख़्त दिलि जे तां लहे।

[धर्म और राज्योंके नामपर युद्ध क्यों न होंगे? जब झगड़ोंकी जड़के कारण वह (परमात्मा) हमारे हृदय सिंहासनोंसे उतर जाता है।]

छो उजड़ दिलि जो मन्दरु दिलबर जो घरु वीरानु आहि
कामु राजा जिति वसे, किअं रामु विचारो रहे?

[मेरे हृदयका मन्दिर उजड़ गया और प्रियतमका घर भी वीरान हो गया। जहाँपर कामराजाका निवास हो वहाँ बेचारा 'राम' कैसे रह सकता है!]

मौलिकवादके इस अन्यायको देखकर भगवान भी उनसे रूठ गया है —

अजु ग़रीबनि जूं झुगियूं झूपिड़ियूं आहिनि घुमे
जो महीम, मसजिदि मन्दर, देवलि, ठिकाणे खां वहे।

[आज भगवान गरीबोंकी घास-फूसकी कुटियोंमें चक्कर लगा रहा है। वह मन्दिरों मसजिदों आदिसे दूर भाग रहा है।]

विज्ञानकी ओर इंगित करते हुए बेवसि लिखते हैं —

तुंहिंजी तस्वीर मंझां कौम जो ज़ुल्मात वसे
तुंहिंजे व्यवहार मां बेदाद जो बर्ताव वसे।

[तुम्हारी तस्वीरसे ही तुम्हारे अन्दर जाति द्वारा किया हुआ अन्याय प्रकट हो रहा है। तुम्हारी व्यवहारसे अन्यायका बर्ताव प्रकट हो रहा है।]

गरीबोंकी झोंपड़ियोंका वर्णन करते हुए जब वे कहते हैं —

अल्ला! मूंखे न घाल गरीबनि जी झूपिड़ी।

[हे प्रभु! इन गरीबोंकी झोंपड़ियोंको आँच तक न आए।]

उस समय उनके हृदयकी सम्पूर्ण सहानुभूति निकलकर गरीबके लिए साकार हो उठती है —

जहिं में मञो मचे थो मिठे लोले जुआरि ते
साफी गुजर जिसे न तबीबनि संदार ते,
पोड़्यो जिसे थो आयि वधेरी अमार ते
पालिबु पवे न हिर्सु जं धीम जे खुमार ते
'बर्सात' जिते जलाए न चिन्ता जी चूणिड़ी
मला! मुड़े न लास गरीबनि जी झूपिड़ी।

[जिस (झोंपड़ी) में ज्वारकी रोटीपर ही आनन्द मनाया जाता है सीधा-सादा जीवन निर्वाह करनेके कारण जिन्हें कभी वैद्यका मुँह नहीं देखना पड़ता बल्कि श्रम करनेके कारण जिनकी आयु बढ़ जाती है और जिनके आनन्दकी मस्तीपर विषाद कभी हावी नहीं होता वहाँ चिन्ता रूपी चिनगारी नहीं जमती — हे प्रभु, उस गरीबकी झोंपड़ीको आँच तक न आए।]

जीवनके लिए जो हमारे हृदयोंमें शुष्क भावना है उसका प्रतिकार करते हुए 'इन्सान' नामक गीतमें कवि लिखता है —

आहि संसारमें इन्सान! उजालो तोखां
तोखे को आहि मला पाण मसहाइब जो खियाल?
का बि आड़े न अटक आहि जे बर्दास न कयीं
आहि दुनियामें समरि धूम मचाइण जो खियाल!

[ए मानव! यह संसार तुम्हींसे प्रकाशित है क्या कुछ कर दिखानेका तुम्हारा विचार नहीं है? यदि संसारमें तुम्हारा धूम मचानेका विचार है तो तुम्हारे सामने कोई भी बाधा उपस्थित नहीं हो सकती। हाँ यदि तुम अपनेको अक्षम (विवश अथवा लाचार) न समझो।]

'जिन्दगी' नामक गीतमें कवि लिखता है —

जिते हयातीअ जा हदुनि सां थी अमलि जग सां जुदा
पर्वे तोखे हुई जिस्मत बहादुर वारी जिन्दगी।

[तू जीवनकी सीमाओं तथा स्वयं संसारसे अलग हो गया यद्यपि तुम भाग्यसे सुदृढ़ी-जीवनका सौभाग्य प्राप्त था!]

पूर में शरिबत जे वि जिअं हो वरगु दिलु खालिमु खुमार
तो रखो लिखियलु तसे अंदरि कुमार्गी जिन्दगी।

[पुष्पोंके भीतर शर्बत भी बीज जिस प्रकार अलग और मधुर था! तुमने तो केवल निर्मूल पीड़ाके भीतर ही जीवनको पहचाना।]

काव्य-जीवनमें भी किशिनचन्द 'बेवसि' ने पहले पहल ईश-वन्दना तथा प्राकृतिक सौन्दर्यपर ही लेखनी चलाई। गांधी-युगके प्रभावसे अभिभूत होकर इनकी लेखनीने देशभक्ति और राष्ट्रीयताकी आग उगली लेकिन अहिंसाके पुजारी बनकर कवि साबरमतीके संत में विश्वास है—जिस समय युद्धके कष्टोंके कारण पश्चिमी संसार रो रहा था उनके आँखोंसे आँसुओंकी धारा प्रवाहित थी और बमोंसे रक्त बह रहा था उस समय उनके कानोंमें गाँधीजीकी यह आवाज आई —

कामियाबीअ लाइ कीन्हे जू नु हारण जो बकर,
तेज़ तोबुनि सां मरण जो ऐं न मारण जो बकर।

[सफलताके लिए न तो खून गिरानेकी आवश्यकता है और न भयानक तोपोंसे मरने अथवा मारनेकी।]

जो तुंहिंजे तहिरक ते मर्या शम्सो कमर
तुंहिंजे हलचल ते फिरे थी खासि दुनिया जी नज़र,
आहि अ इयह ते हिन ई आजिमूदे जो असर
लीन तुंहिंजी सहिकंदड़ संसार खातरि खुशि खबर,
जंगिजी खिलिरन जो नियमो आहि इन मां ख़ातिमो
का बि दाढ़ो कौम कंदड़ न ने नाहक जी ज़िमो।

[तुम्हारे इस आन्दोलनकी ओर सूर्य और चन्द्र भी विस्मित नयनोंसे ताक रहे हैं और सारे संसारकी आँखें इस ओर लगी हुई हैं। भविष्यपर इस प्रयोगका प्रभाव होनेवाला है और तुम्हारी विजय इस हाँफते हुए संसारके लिए मंगल सूचनाके रूपमें है। बुराइयाँ इसीके सामरिक द्वारा नष्ट होंगी क्योंकि कोई भी राष्ट्र अन्यायपूर्ण रक्त-पातका उत्तरदायित्व नहीं लेगा।]

अहिंसा और गाँधीवादका यदि सिन्धमें प्रचार किया तो 'बेवसि' और उनके शिष्या "हिरानंद" और "दुखायल" द्वारा —

पाण्हीं दुनिया हाणि मञींदी अहिंसा अनमोल असूल,
ऐटामिक बमियोंजो नां नत थींदइ था सामानु गांधी।

[अब संसार स्वयं ही अहिंसाके अमूल्य सिद्धान्तको स्वीकार करेगा, अन्यथा ऐ गांधी ! उनके लिए एटामिक बमका प्रलयका सामान होगा।]

यदि मानवताके कल्याणके लिए मानवमें उत्सर्गकी अपेक्षा करते हैं तो गीताके भगवानकी तरह भयानकका नित्य उत्सर्ग करते रहनेका सन्देश भी देन है —

अचवा अच मन्दरमें बलाए प्रेमजी अग्निी,
विचा कइ आप आहूती रखीं हिंसिजा दुखारा थी।

[हे रूप और रंग रहित (निर्गुण) प्रभु! तुम इस रूपवाले (सगुण) मन्दिरमें प्रेमकी अग्नि जलाकर, अपनी आकृति देखनेके लिए हृदयके द्वार बनाते हो।]

जहाँ एक ओर बेदिल पर सूफ़ियोंका प्रभाव पड़ा तो दूसरी ओर विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरका पथका अनुसरण करनेमें भी वे पीछे नहीं रहे। रवि बाबूके 'सत्यं शिवं सुन्दरं' की झलक उनके काव्यमें जहाँ-तहाँ प्रकट है। उन्होंने अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें शान्ति और तसव्वुफ़ (सूफ़ीवाद) की गुत्थियाँ सुलझानेमें ही अपने समयका सदुपयोग किया। भावोंकी लहरों और समुद्रकी सूक्तियों में ये भाव जहाँ-तहाँ बिखरे हुए हैं।

वे प्रार्थना नामक गीतमें लिखते हैं —

> बर्क़चिरो आँहिरो बिसी हरि चीत्रमें तुँहि को चिटो
> अहिड़ी चितमें करि चिमिकाट सों चाडाणि हू।

[हे प्रभु! तू मेरे हृदयमें वह ज्योत्स्ना ज्योतित कर जिससे मैं तुम्हारा समारोह प्रत्येक वस्तुमें स्पष्ट रूपसे देख सकूँ।] क्योंकि देखता हूँ कि —

> जोग, जप तप साधना समितिं समाधी ज्ञान में
> को डंगे ही मस्तु माया को अमर अजियक किये?

[ज्ञान जप तप समाधि साधना और अज्ञान आदिमें भी यह मायाका सम्प्र अजगर सदा काटता रहता है।]

इसका प्रतिकार तो हम प्रेमकी पीड़ा द्वारा ही कर सकते हैं —

> सोड़ धारां पीड़ नाहें, पीड़ बिनु नाहें जमीर
> बिनु जमीरे नाहि सीरो, दर्द आहि दिल पीक कड़।

[क्योंकि सिवा पीड़ा उत्पन्न नहीं होती और पीड़ाके सिवाय ज़मीर पैदा नहीं हो सकता और ज़मीरके सिवाय चाशनी (रस) पैदा नहीं हो सकती। सचमुच पीड़ा ही हृदयको पवित्र बनानेवाली है।]

> प्रेम सागरमें पवन सों मामता मिटिड़ी वई
> हिन पवितिरि जल अर्घरि जड़ पापनी पटिड़ो वई

[प्रेम सागरमें गोता लगानेसे ममत्व मिट गया और इस पवित्र जलमें अवगाहन करनेसे पापकी जड़ ही नष्ट हो गई।] तो प्रियतमके लिए मन्सूर और शम्स तबरेज बनना होगा —

शौक़ सां थउ सर दिलि थी शम्स तबरेज़ी मज़ो
मुहिब लइ मन्सूर थी, दाथारि रतरेज़ी मज़ो

[ऐ साधक! सर दिल होकर शम्स तबरेजके पथका आनन्द लूटो और प्रियतमके लिए मन्सूर बनकर रक्त बहानेका आनन्द लूटो।]

निजत्वको मिटानेमें ही यह आनन्द आएगा —

प्रिति स्पर्श सां बुरी मिटिजी, बुराईअ में अचे
कीमियागर पुर्व आहे लोह लइ पारसु पहणु।

[प्रेमके स्पर्शसे ही बुरी (ममत्व) मिट कर बुराई (प्रभु रूप) बन जाती है। प्रेम लोहेके लिए पारस है, कीमियागर है।]

उपनिषद्के महावाक्यानुसार —

'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह

सचल भी बतलाते हैं —

सचे बाणी न अचि जाणी, मती बाणी जित्थां फिरिबे
जो रोशनु पाण तंहिंजे ज्ञान जो ज़रूरो मती छा जो?

[जिसे वाणी वर्णन नहीं कर सकती, बुद्धि जान नहीं सकती, जो स्वयं प्रकाशित है उसके लिए ज्ञानका प्रकाश क्यों? तो फिर उसे कैसे जाना जा सकता है?]

ज्ञान ज्ञातल सां पवे जे ज्ञाम अज ज्ञातल संदी,
नूर नेणनिमें सए सिरि, मुंति ताज़ाई अचे।

[अज्ञातका ज्ञान यदि ज्ञान द्वारा प्राप्त हो जाए, तो नए सिरेसे नयनोंमें प्रकाश समा जाए, और मूरति उद्भूत हो उठे।]

अण डिठल ते जे नसीबनि सां डिठल अंदरि दिसां,
हुंद हुरे में मठक् मजमीत राजाई अचे।

[अदृश्यका यदि सौभाग्यवश दृश्यमें दर्शन हो जाए, तो अवश्य ही मेरे अन्दर अजेय आनन्द आ जाए।]

वे उसे और भी इस प्रकार स्पष्ट करते हैं —

जे पसां प्राकोम में जाकी ऐं फना अंदरि बका
मुक्ति जो संसार बन्धमें सर्नु सरहाई लधे।

[यदि उस अरूपका रूपमें ही दर्शन करूँ और विनाशमें ही अविनाशीका दर्शन पा जाऊँ तो संसार-कारामें मुक्ति द्वारा विजय आनन्द आ जाए।]

इससे प्रकट है कि बेवसि अज्ञातको ज्ञात द्वारा और निर्गुणको सगुण द्वारा ही प्रकाशमें लाना चाहते हैं। लेकिन इनकी निराकारकी साधना सगुण द्वारा होते हुए भी आत्मीय पीड़ामें न होकर पर पीड़ामें निहित है।

कीमती हीरे कणीअ खां आहि कतिरो कीमती
ख़ूनु जो हुर्मतु ज़ुसीअ सां पर ब्यार जे वासिते।

[अमूल्य हीरेकी कनीसे वह खूनका कतरा अधिक मूल्यवान् है, जो दूसरेके पसीने (कष्ट) के लिए गिराया जाता है।] फिर भी वह निष्फल नहीं जाता —

बाफ धरितीअ तां थियल बूंद बहारी थी वरे,
थी अचे पंहिंजो दिनो, पाण लइ नइमत थिये।

[पृथ्वीपरसे उठी हुई वाष्प आनन्ददायक बूँद बनकर लौटती है। अपने हाथों दी हुई वस्तु अपने लिए नियामत (वैभव) बन जाती है।]

इन्हीं द्वारा किस प्रकार प्रभु लीला रचाता है अथवा अनेकत्वमें एकत्व तथा अन्य कई वेदान्त तथा तसव्वुफके विषयोंको लेकर बेवसि साईंकी रचना हुई है।

'बेवसि'ने अपने युगकी भावनाओंकी बड़ी ही सुन्दर ढंगसे अभिव्यक्ति की है। उनके कला पक्ष अथवा भाव पक्षके बारेमें इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि उनकी कविता कोई ऐसी ढोल नहीं है जिसपर युगरचनावाले लोग इकले चोट करते जाएँ, फिर उसमें भले ही असुन्दर और कर्कश आवाज क्यों न निकले। उनका काव्य आरकेस्ट्राके समान है, जिसमें सितार बीन शहनाई मृदंग आदि कई बाजोंका समावेश रहता है और जिसमेंसे सामञ्जस्यपूर्ण स्वर निनादित करनेके लिए बहुत ही विज्ञ और चतुर कलाकारकी आवश्यकता है।

१. कुदिरत धारा!

(धुन– तिलंगु)

सभु कनि तुंहिंजी साराह–कुदिरत धारा!
निमसु कोतो नूर निज़ारा।

कोटा कोटि बणायइ धरितयूं-सहसें सिज ऐं तारा कतियूं,
जिनि जो अन्तु न पारा–कुदिरत धारा ॥१॥

गुलनि अंदरि सुरहाणि धरी थी, मोतियुनि सां महिराण भरी थी
हीरा लाल हज़ारा–कुदिरत धारा ॥२॥

जदहिं बणनि ते बाह अचे थो–पन पन भी परिमाउ अचे थो
छिम छिम जा छिमिकारा–कुदिरत धारा ॥३॥

पंहिंज पखुनि ऐं चीहुनि सोभी, बुलिबुलि कोयलि बोले बोली
मोर मचनि नामियारा–कुदिरत धारा ॥४॥

अजबु बणायइ बिजिलयू बादल–बूंदूं बरस बरस कनि पाणसि,
चाजट कनि बसिकारा–कुदिरत धारा ॥५॥

मुन्दु मिड़ियोई मन्दर आहे–मागो समझे अंदरि आहे
बेहुनि मंझि बुआरा–कुदिरत धारा ॥६॥

सास अंदरि को सासु धमे थो, 'बेवसि' मनहुंदि नादु वजे थो,
नोबत नींहं नग़ारा–कुदिरत धारा ॥७॥

१ स्रष्टा!

(स्वर– सिंध)

ओ स्रष्टा! सब तुम्हारी प्रशस्ति कर रहे हैं।
ओ निर्मल ज्योति! ओ प्रकाश द्रष्टा!!

कोटि-कोटि लोकोंकी सुमन रचना की। ओ स्रष्टा! तुमने सहस्रों सूर्य चन्द्र नक्षत्र और ग्रह उपजाये जिनका अन्त नहीं है ॥१॥

सुमनोंमें सौरभका सञ्चार करते हो मोतियोंसे समुद्रको भर देते हो। उपजाते हो, हजारों हीरे और लाल ओ स्रष्टा! ॥२॥

जब वृक्षोंपर समीरण दौड़ लगाता है, तब पत्ते-पत्तेसे छम-छमकी प्रतिध्वनि उठती है ओ स्रष्टा! ॥३॥

कीर कोयल और बुलबुलोंने तुम्हारी प्रशंसामें चोंच खोल दी है। सुन्दर मयूर नाच रहे हैं ओ स्रष्टा! ॥४॥

विचित्र बिजली और मेघोंका तूने निर्माण किया है। बूँदें बरस बरसकर ठण्डक पहुँचा रही हैं बादल कड़क रहे हैं ओ स्रष्टा! ॥५॥

यह सारा विश्व ही मन्दिर है जिसमें आत्मा (स्वामी) प्रत्येकके हृदय में विराजमान है प्रत्येक शरीररूपी मन्दिर बना हुआ है ओ स्रष्टा! ॥६॥

श्वासके अन्दर जो प्रश्वास उच्छ्वसित है वह अनहदका नाद बज रहा है और बज रही हैं स्नेह-सिक्त मुरलियाँ ओ स्रष्टा! ॥७॥



२ तूं

तूं ई सिज में सोझिरो ऐं चंड में चांडाणि तूं,
सूंहं ऐं सोभ्या गुलनि में, पुणि सुगंधि सुरहाणि तूं ।

बादलनि मां पो वसीं वसांति बूंदूं बणी
तेनु विजलीअ जो तज्जलो ऐं कड़क कारिणि तूं ॥१॥

धा पटापटि झंझलठि में थो बधे तुहिंजो मकाउ,
सुबुह में थिए सोन रंगो, शाम में गाढ़ाणि तूं ॥२॥

धुध करीं पो पाण सां पोलाइ हिम ससार जो,
थो पिथिह, तारा, सितारा ऐं मखुट्ट नीलाणि तूं ॥३॥

थो सुबी लहिरुनि मथां, छोल्युनि मथां छुलको वतीं
समुंडजी ससती बि तूं, महिरामजी माठाणि तूं ॥४॥

तेसु तुहिंजो बाउ, वाचूड़े, तिखे तूफ़ान में,
होर में हलिकाणि तूं, ऐं बाफ में भाफाणि तूं ॥५॥

माफ़ मोरयुनि हार थो सींगार सम्झीअ जो करीं,
तूं जवाहिर में झलक मासनि मथरि लालाणि तूं ॥६॥

सर्सु तो साहिब सदो आहे सिफ़ति सारहु चां
वासि घुम्युनि जो सठामो ऐं गुणनिजी खाणि तूं ॥७॥

बिरह बेबसि ! थो उथे हर रूप मां तुंहिंजो रंगी
ताणि सू मुंहिंजो तलब खे पारि पहिंजे माणि तूं ॥८॥

---

३ तू

तू ही सूर्यमें प्रकाश है चन्द्रमाकी चन्द्रिका है।
तू ही फूलोंमें सौरभ तथा सौन्दर्य है।

तू ही मर्योकी बूंदें बनकर बरसता है। विद्युत्का तीव्र प्रकाश तू ही है और तू ही है मेघोंकी श्यामलता ॥१॥

इन्द्रधनुषमें रंग-बिरंग आवरणोंमें तुम्हारा ही सौन्दर्य झलकता है तू उषाकी स्वर्णिम विभा है और सन्ध्याकी रक्तिम छटा भी तू ही है ॥२॥

इस संसारके पोलार (आकाश) को तू ही अपनेमें ओतप्रोत करता है। असंख्य तारे ग्रह-नक्षत्र और नील सन्ध्या आभा तू ही है ॥३॥

तू ही लहरोंपर दोलायमान और उच्छलित है। समुद्रकी कठोरता भी तू है और महार्णवकी शान्ति भी तू ही है ॥४॥

वायु वात्याचक्र और तूफानमें तेरी ही तीव्रता है। समीरमें हल्कापन भी तू है तथा बाष्पकी आर्द्रता भी तू ही है ॥५॥

हिम बिन्दुओंकी माला बनकर हरित पौधोंका शृङ्गार करते हो। तू जवाहरोंकी ज्योति और लालोंकी लाली है ॥६॥

हे प्रभु ! तू अवर्णनीय तथा प्रशस्तिसे परे है। तू विशिष्ट निधि तथा गुणोंका आगार है ॥७॥

हे नए रंग रचनवास ! तेरे प्रत्यक्ष स्पर्श विरह उत्पन्न होता है। अतः मेरी उत्सुकताको भावर्पित कर मुझे अपने निकट ले आ ॥८॥

---

४ होतु

आहे मशहूर आलिम में, जफ़ा तुंहिंजी, वफ़ा मुंहिंजी,
हक़ीक़त में मगरि आहे, वफ़ा तुंहिंजी, जफ़ा मुंहिंजी ।

हुआरें चश्म रोशन सां, यची तारनि सितारनि सां,
तबहिं भी दिलि कदूरत सां, न थी आहे सफ़ा मुंहिंजी ॥१॥

जिनकु तुंहिंजो सदा आई, जिनिजि तुंहिंजे न दिर्मा पाई,
जगत में आहि हीअ थाई, सदा तुंहिंजो, पता मुंहिंजो ॥२॥

कयों सींगार सो साईं, मिलण लाइ होतु हिरिखाईनि,
न पर पेरो अन्दरि पाईं, दिसी घटि चाहिना मुंहिंजी ॥३॥

शिकारी शौक़ु थ्यो पैदा, लगा सिर तेजबाननि जा
चमाया तो त मूं मार्या, दमा तुंहिंजी हुना मुंहिंजी ॥४॥

मुखनि में साफ़ु बिसिरी थ्यें, दुखनि में यादि मस मस थ्यें,
तबहिं भी रातिं रातर बिर्में, तबइ, से बेहमा मुंहिंजी ॥५॥

कहा कहिणी थयो मुहिंजी, रहा रहिणी मगरि सचिणी,
मथाईअ लइ बहिम बहिणी, थी 'बेवसि' बासिना मुंहिंजी ॥६॥

---

४ प्रियतम



सारे विश्वमें तुम्हारी कठोरता और मेरी विश्वास पात्रता प्रसिद्ध है लेकिन वास्तवमें सुशीलता तुम्हारी है और कठोरता मेरी।

सहस्रों उद्भासित नयनोंसे ग्रह और नक्षत्रोंके रूपमें आते हो, फिर भी मेरा हृदय ईर्ष्या रहित नहीं हो सका है ॥१॥

सदा तुम्हारा नमक खानेपर भी तुम्हारे निमित्त एक कौड़ी भी नहीं देता। संसारमें निश्चय ही तुम्हारी उदारता और मेरा अपराध प्रसिद्ध है ॥२॥

प्रियतम! तुम्हें रिझानेके लिए सैकड़ों प्रकारके शृंगार करते हैं लेकिन मेरी सामर्थ्यकी कमीके कारण तुम भीतर पाँव तक नहीं धरते हो ॥३॥

मेरे हृदयमें आखेटका शौक पैदा हुआ और मूक प्राणियोंके सर कटे। तुमने उपजाए और मैंने मारे। इससे तुम्हारी दया और मेरी हिंसा वृत्ति प्रकट होती है ॥४॥

सुखोंमें विस्मृत हो गए और कष्टोंमें आकर याद आए, तथापि हे दाता! तुम अजस्र दान दिए जाते हो फिर भी मैं निर्लज्ज हूँ ॥५॥

बातें तो बड़ी सुन्दर-सुन्दर करता हूँ लेकिन मेरा आचार तथ्य रहित है। मेरी वासना अहंकार और भ्रमके वशीभूत हो गई है ॥६॥



५. साबरमतीअ जो सन्तु

तूं किरोड़ हिंदुस्तानीअ जे दिलिनि जो विश्राम,
तोंहिजी खामोशी बताए तेजु सूरजनि जो समानु,
मुर्कमें तोंहिजे समायल सर्गु बरिबी बास्तानु,
तोंहिजे पेशानीअ मथां सावितु सवाईअ जो निशानु
पाण ते परिखा पठी पोइ की बि कहिंजीअ सां कहों,
सो बणणु चाहीं न ध्यो खे जो न कू बि रहिणीअ रहीं ॥१॥

बोर फ़ुर्बानी मथर में दर्द खे देवीअ अगियां,
छा न छा मेटा घरी तो शौक एं मथा मंझां,
खिलि, विमापु एं बसु बधी, जिंदु जानि चाड़ियाइ चाह सां,
मालु मिल्कियत एं कुटंबु परिवारु मुल्की प्यार तां,
मावर्श भोबो अमुलु, हीरो हयातीअ जो रखो,
सूर सेजा तां शहादत जी मिठी माखी चखो ॥२॥

तो जबर्दहि खावो गुलामीअ जे मुसियत तस्वीर खे,
कारिगरि जाती न की शमिशेर या तक़िरीर खे
माठि सां मेटणु धुर्यो तदबीर सां तक़िबीर खे,
रमिज सां टोड़णु धुर्यो, हिम बुल्म जे बंजीर खे,
जोद जिस्मानी छद तो राम वहानो सत्यो,
एं अहिंसा जो नमों हथियारु हेरानी सत्यो ॥३॥

मगिरबी दुनिया सन्ती पे बगि जू सविस्यूं सहूंयो,
मोह मननि मां पहूंयो थ, कूनु जवमनि मां बहूंयो,
जिनि सधा थी अंगि पे पाहीं पटण सह पे पहूंयो
सोचितो भावार ही कन ते भचो तिमि जे रहूंयो,
कामियाबीअ माइ कोन्हे पूनु हारण जो जफ़ह,
तेजु तोबनि सां मरण जो एं न मारण जो वदह ॥४॥

५. साबरमतीका सन्त

तुम कोटि-कोटि मूक भारतीयोंकी वाणी हो। तुम्हारी शान्ति तीव्र प्रभञ्जनका आगमन है। तुम्हारी मुसकराहटमें पीड़ित हृदयोंकी कथा समाई हुई है। तुम्हारे ललाटमें सत्यताके चिह्न प्रकटित हैं। अपने ऊपर प्रयोग करनेके बाद ही वाणीसे कुछ कहते हो। जिसपर स्वयं आचरण नहीं किया वह बात किसी अन्यसे कहना नहीं चाहते ॥१॥

हे वीर! तुमने बलि-मन्दिरमें पीड़ा देवीके आगे श्रद्धा और प्रेमसे क्या-क्या भेंट नहीं रखी! हृदय मस्तिष्क बल बुद्धि तन मन धन तथा कुटुम्ब परिवार आदिकी भेंट चढ़ाई। देश प्रेमकी बलि-वेदीपर क्या क्या न्यौछावर नहीं किया? अमूल्य जीवन-हीरकको आदर्श बनाकर धूल शय्यासे बलिदानके मधु (शहद) का आस्वादन किया ॥२॥

तुमने जब पराधीनताकी उलझी हुई तस्वीरकी परख की तब तुमने तलवार और भाषण आदिको अनुपयुक्त समझा तब शान्तिके द्वारा ही भाग्यकी मुक्ति तथा यम द्वारा पलटना चाहा। तुमने इन अन्यायकी शृङ्खलाओंको चातुर्यपूर्ण युक्तिसे तोड़ना चाहा। शारीरिक शक्तिका त्याग कर तुमने आत्मिक शक्तिका मार्ग प्रदर्शित किया और अहिंसाका आश्चर्यजनक नया अस्त्र बतलाया ॥३॥

जब पश्चिमके लोग युद्धके कष्टके कारण त्राहि त्राहि कर उठे थे जिनकी आँखोंमें अश्रु-धारा और घावोंसे खून टपक रहा था जो गुटबन्दी कर युद्धका आमूल उन्मूलन करनेके लिए विचार विमर्श कर रहे थे अचानक उनके कानोंमें यह आवाज पहुँची— सफलता प्राप्तिके लिए न तो खून गिरानेकी आवश्यकता है और न तेज तोपोंसे मग्न और मारनेकी। ॥४॥

५. साबरमतीअ जो सन्तु

● ● ●

तूं किरोड़ें हिंदुवास्युनि बेजियामनि जी जियाम,
तुंहिंजी ख़ामोशी बसाए तेजु तूफ़ानी बयानु,
मुर्क़में तुंहिंजे समायल सर्व दरिवी बास्तानु,
तुंहिंजे पेशानीअ मंझां ताबितु सचाईअ जो निशानु
पाण ते परिवा घटी मोह जी बि कहिंजीअ सां कहीं,
सो पवनु चाहीं म म्ये बे जो न क़ बि रहिजीअ रहीं ॥१॥

वीर क़ुर्बानी मवर में वर्व थे देवीअ अगियां,
घा न घा मेटा घरी तो खोक एं भख़ा मञां,
विलि, विमागु एं बलु बधी जिंदु जानि धाड़ियइ चाह सां,
मालु मिल्कियत एं कुटबु परिवारु मुल्को प्यार तां,
भावर्शी मोबो अमुलु, हीरो हयातीअ जो रखी
घूर सेजा तां शहादत जी मिठी माखी चखी ॥२॥

तो पर्वाह जाबो गुलामीअ जे मुंझियल तस्वीर खे,
कारिमरि जली न को शमिशोर या तक़िरीर खे
माठि सां मेटणु घुर्यो तदिबीर सां तक़िवीर खे,
रमिज़ सां छोड़णु घुर्यो हिन जुल्म जे ज़ंजीर खे,
ज़ोरु जिस्मानी छ्बे सो राजु रूहानी सल्यो,
एं अहिंसा जो नमों हथियारु हैरानी सस्यो ॥३॥

मगिरबी दुनिया रुलो थे जंगि जू सविस्यूं सह्यो,
ज़ोरु मणनि मां पह्यो थे खूनु बमनि मां बह्यो,
जिनि जया थो जगि ढो पाड़ां पटण सह थे पह्यो
मौचितो भावाजु ही कन्न ते मधी तिनि जे रह्यो,
कामियाबीअ ज़ाइ नींह तूनु हारण जो असरु,
तेजु तोबमि सां मरण जो एं न मारण जो ख़बरु ॥४॥

५. साबरमतीका सन्त

तुम कोटि-कोटि मूक भारतीयोंकी वाणी हो। तुम्हारी शान्ति तीव्र प्रभञ्जनका आगमन है। तुम्हारी मुसकराहटमें पीड़ित हृदयोंकी कथा समाई हुई है। तुम्हारे ललाटसे सत्यताके चिह्न प्रकटित हैं। अपने ऊपर प्रयोग करनेके बाद ही वाणीसे कुछ कहते हो। जिसपर स्वयं आचरण नहीं किया वह बात किसी अन्यसे कहना नहीं चाहते ॥१॥

हे वीर! तुमने बलि-मन्दिरमें पीड़ा दवीके आगे श्रद्धा और प्रेमसे क्या-क्या भेंट नहीं रखी! हृदय मस्तिष्क बल बुद्धि तन मन धन तथा कुटुम्ब परिवार, आत्मिकी भेंट चढ़ाई। देश प्रेमकी बलि-वेदीपर क्या क्या न्यौछावर नहीं किया? अमूल्य जीवन-हीरकको आवरण बनाकर, धूल शय्यामें बलिदानके मधु (शहद) का आस्वादन किया ॥२॥

तुमने जब पराधीनताकी उलझी हुई तस्वीरकी परख की तब तुमने तलवार और भाषण आदिको अनुपयुक्त समझा तब शान्तिके द्वारा ही भाग्यकी मुक्ति तथा श्रम द्वारा पलटना चाहा। तुमने इन अन्यायकी शृङ्खलाओंको चातुर्यपूर्ण युक्तिसे तोड़ना चाहा। शारीरिक शक्तिका त्याग कर तुमने आत्मिक शक्तिका मार्ग प्रदर्शित किया और अहिंसाका आश्चर्यजनक नया अस्त्र बतलाया ॥३॥

जब पश्चिमके लोग युद्धके कष्टोंका कारण [illegible] थे जिनकी अविराम मधु-धारा और घावोंमें खून [illegible] गुटबन्दी कर युद्धका मामूल उन्मूलन करनेके [illegible] थे अचानक उनके कानोंमें यह आवाज पहुँची— [illegible] न तो खून गिरानेकी आवश्यकता है और न [illegible] मारनेकी।' ॥४॥

यो तके तुँहिंजे तहिरक ते मर्था शम्सो क़मर,
तुँहिंजे हलचल ते फिरे थी ख़ासि दुनिया जी नज़र,
आहि आईन्दह ते हिन ई आज़िमूदे जो असर,
सोभ तुँहिंजी सहिकंदड़ संसार ख़ातिरि ख़ु़शि ख़बर,
ज़ागिजू फ़ितिरत जो पियणो आहि उन मां ख़ातिमो,
का बि शाही कोन जणबी थूम माहिक जो जिमो ॥५॥

तुँहिंजे हिम्मत जे अगियां मुश्किल न पहुचणु कोहक़ाफ़ु,
तुँहिंजो कामोगी तरीक़ो ज़ुल्मिरेजीअ खे ख़िलाफ़ु
तुँहिंजे पासे प्रेमु एं पाकेज़िगी, इन्साफ़ु साफ़ु,
तुँहिंजे साम्हूनि जी सफ़ाई आहि शीशे जां शफ़ाफ़ु,
चोट तुँहिंजो आहि कहिं भी ख़ासि सां या आम सां,
यो लगी आला मसूमनि ते सिरिशे ख़ाम सां ॥६॥

पहिंजी मादुरि जो इशारो करि समझे ग़ोर सां,
आहि ही तुँहिंजो इशारो ख़ासि ग़ैबी तोर सां,
खे हली भ्यो हुकुम हेकर कहिं मुनासिब तोर सां,
हिन्दु सागर एं हिमालय टकिरजा शाह ज़ोर सां,
हिन इशारे खे बिसनि थ्यूं भज्ञ मरथूं छाहठि करोड़,
हिन इशारे ते सजुनि खाँहूं सम्रू छाहठि करोड़ ॥७॥

कहिंजे रूहानी फ़ुतिमे आहि 'बेवसि' साबिती,
कहिंजे पहिरे जे चमक मां आहि ताबो ताबिती
कहिंजे पसिमन्त में न कहिं लइ नफ़रती मारावती,
आहि तहिं साबरमतीअ खे सस्ती माराविती,
ताजु माथावी धुरे भारतु तकणु तुँहिंजे हथां,
आहि हिन्दुस्तान खे मनु लाड़ु लांगोटिये मथां ॥८॥

तुम्हारे द्वारा प्रवर्तित आन्दोलनपर सूर्य और चन्द्र टकटकी लगाए हैं और तुम्हारी हलचलपर संसारकी विशेष रूपसे दृष्टि गड़ी हुई है क्योंकि तुम्हारे इस प्रयोगका प्रभाव भविष्यपर पड़नेवाला है। तुम्हारी विजय होने हुए संसारके लिए शुभ सूचना है। इसके द्वारा ही सामरिक उपद्रवोंका अन्त होनेवाला है। कोई भी राष्ट्र अत्याचारपूर्ण खून-खराबीका उत्तरदायित्व नहीं लेगा ॥५॥

तुम्हारे उत्साहके आगे कोहकाफ (एक पर्वत विशेष) पर पहुँचना कठिन नहीं है। तुम्हारा शान्तिपूर्ण तरीका खून-खराबीके विरुद्ध है। तुम्हारे पक्षमें प्रेम पवित्रता और न्याय हैं। तुम्हारे साथियोंकी कार्यदक्षता तोपसे भी अधिक पारदर्शी है। तुम्हारा विरोध किसी खास (विशेष) अथवा आम (साधारण) से नहीं है। तुम उच्च आदर्शोंपर डटकर न्यायपूर्ण पद्धतियोंसे लड़ते हो ॥६॥

सोच-समझकर ही अपनी उँगलीसे संकेत करो क्योंकि तुम्हारे इंगितके पीछे ईश्वरीय शक्ति है। यदि तुम्हारे इस इशारेका आशा किसीके विरोधमें चली गई तो फिर हिन्द सागर और हिमालय दोनों जोरके साथ टकरा उठेंगे। तुम्हारे इस संकेतकी ओर आज छियासठ करोड़ आँखें उठी हुई हैं। इस इंगितपर छियासठ करोड़ भुजाएँ उठ खड़ी होंगी ॥७॥

तुम्हारी रहन-सहनमें सादगी समाई हुई है। तुम्हारे चेहरेपर ताजगीकी चमक रौनक है जिसमें मानव जातिके लिए न घृणा है, न रोष है। उस साबरमतीके सन्तकी ही यह स्वतन्त्रता है। भारत आज तुम्हारे ही हाथों स्वतन्त्रताका मुकुट पहनना चाहता है। आज भारतको सेवाग्रामवालेपर बड़ा गर्व है ॥८॥

———

६ शाहरु

तो में हर विलि बे टिकण साइ समणु जाइ वपे,
हर जमाने जो ग़मा तो में छियण साइ वपे,
बे मज़्नी विलि त ग़हम साइ पि मोम्याइ वपे,
चोसा तुँहिजे सां हुमणु होसु पि हमिराहु वपे,
जहिं बे दुनिको प्यो हुमी तहिं कोई बेतरि प्यो वमी,
सा सये ग़ण न ग़ने, महिसो दू ग़णगोत ग़मीं ।।१।।

बोल बोलण पी लगे तो मां जिबालुमि जो बर्या,
बे बयानीअ खे मिले तुँहिजे वसीले चो बर्या,
गुप्तु इसिरार करीं रोबजे पर्दे मां मर्या,
आणी सागर से पो साग़र में, करीं मूइमियां,
मोध-स्पश से कसा आहि पियस कहिड़ी ?
जोँहसां हरि जिस्स वजे साब सुरीसे जहिड़ी ।।२।।

पाण सां पर प्यो सपी, साणु न पर पाणु वणी,
पँहिजे परजुनि जो या पुरिजुनि जो न कुमु माणु वणी,
सापु ससार बे सुरति जो समरु सामु वणी,
कमु विलि वी प्यों क़ दीअ सां न मगरि बोण वणो,
मागि मापे बे दे जोति जगाई जग में,
रोशिनी देह बे वी, सामि जसाए अग में ।।३।।

सहिर बिमसीअ जी तिसो पँहिजे का जजिबमि में मरीं,
संहिसां हिक आइ तां हरि जाइ जो कैसाउ करीं,
जिस्म मुर्वह में पि हिक वारि मई जामि भरीं,
हर सहिरक में वामां सोबे, जमा बे तूं यरीं,
तुँहिजो बोधार ऐं वाणो ऐं कमु समु तफसो,
जाति मां ज़ाति सहो सो मां बरे मामु मसो ।।

६ कवि



तुममें प्रत्येक हृदयमें स्थित होनेके लिए स्थान अपेक्षित है और अपेक्षित है प्रत्येक युगकी भोग्य सामग्री आत्मसात् करनेकी शक्ति। यदि कोई हृदय टूटता हो तो उसके मिलानेके लिए मोमिया (मरहम) भी चाहिए, तुम्हारे आवरणके साथ सद्बुद्धिका समायण भी अपेक्षित है। तुम्हारा व्यंग भी स्पृहणीय हो। कठिनतासे समझमें आनेवाली वस्तुका भी ग्रहण करनेकी बुद्धि तुममें अपेक्षित है ॥१॥

मूक व्यक्तियोंकी वाणी तुम्हारे द्वारा ही वाल्मी है। अवर्णनीयको तुम्हारे द्वारा ही वर्णित होनेका अवलम्ब मिलता है। गुप्त चमत्कारोंका प्रकाशक पद्य तुम्हीं प्रकट करते हो। सागरको गागर (प्याले)में भरकर सञ्जीवनी बना देते हो। तुम्हारी बुद्धि-स्पर्शकी ऐसी कौन-सी कला प्राप्त है जिससे प्रत्येक वस्तु मधुर काव्यकी तरह मह्त हो उठती है ॥२॥

परको अपने साथ बहुत प्रिय पाते हो लेकिन अपनेको सदा भूल जाते हो। अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओंका परिमाण तक याद नहीं रखते हो। संसारकी घटनाओंके साथ-साथ स्वयं चलते हो। बड़ी प्रसन्नतासे हृदयके रक्तका उत्सर्ग करते हो फिर भी तुम्हें उसका भान नहीं होता। स्वकीयता और अहंको आग लगाकर संसारमें ज्योति जगाते हो। पहले अपनी जान गंवाकर संसारको प्रकाशसे पूर्ण कर देते हो ॥ ॥

विद्युत्से भी वेग पूर्ण होकर अपने भावोंमें भरते हो। उसके द्वारा एक ही स्थानसे सर्वत्र प्रसारण करते हो। एक बार मृत प्राणीमें भी नव-जीवनका सञ्चार कर देते हो। प्रत्येक आन्दोलनमें युग तुम्हारी ओर और तुम युगकी ओर झुकते हो। तुम्हारे भाव वाणी और कर्म सभी सफल हैं जब कि तुम महत्तम दान (प्रेरणा) देकर जनताका कल्याण करते हो ॥४॥

अहिड़े कँहि मौजि रसी सुँहिणे रहणनी दुनिया
कँहि कशशि सो न जितो आहि महण जी दुनिया,
आहि मण बाए, मचसु सुँहिजे पहम जो दुनिया,
कहि न बहिबार जे पाहुड़ में महण जी दुनिया,
रावि चोवसि जो घिटी या कि उमासी कहिड़ो
सारी मोरयुनि जे पुठ्यां सागो समासो बहिरी ॥५॥

साकि पेरमिजी फलकु सुँहिणे घुमण लाइ अचे,
होर कुमिकार भरी तोसां घुमण लाइ अचे,
मोत–सेजा ते मका तोसां सुम्हण लाइ अचे,
बजबु ऐं रसु वि 'पवसि पी घुमण लाइ अचे,
बिसि जे परियास में सा मोज ऐं मस्ती न हुजे,
ऊष घाइरजो पमाने में जे हस्ती न हुजे ॥६॥

———

तुम्हारे निवासका यह संसार उन्नतिकी उस पराकाष्ठाको पहुँच गया ' जहाँसे वह किसी भी आकर्षणसे निम्न गामी नहीं हो सकता। तुम्हारे स्तरकी दुनिया अचलकी तरह अविचल हो गई है वह व्यवहारके किसी भी प्रवाहमें प्रवाहित होनेवाली नहीं है। पूर्णिमाकी चन्द्रिका पूर्ण अथवा अमावस्याकी तम पूर्ण तमिस्रा ही क्यों न हो लेकिन तुम गहरे समुद्रमें ठकर मोतियोंकी खोज जारी रखते हो ॥५॥

स्वर्ग भी तुम्हारा पग-रज चूमनेके लिए आता है। सौरभ पूर्ण समीरण तुम्हारे साथ विचरण करनेके लिए आता है। मृत्यु शय्यापर अमरता तुम्हारे साथ सोनेको आती है। चाहे नृत्य हो चाहे समाधि दोनों ही तुम्हारे साथ झूमनेको आती है हृदय सागरमें यह आनन्द और मस्ती ही न आती यदि युगमें महाकविका अस्तित्व न होता ॥६॥

———

● पदी दिलि

करि दुनिया में दिलि वधेरी-तूंबि रहु मां भी रहां,
आणि मन-बुतीअ में फेरो-तूं बि रहु मां भी रहां,
अन मज़ाम्बत खां न आहे, शख़िसयत में आह जे,
दिलि जे कहि हमिदर्द भाऊ में मला घोरो त जे,
तुंहिंजी मुंहिंजो करि सवेरी, तूं बि रहु मां भी रहां ॥१॥
गरिजे हमि वतनी न आहीं, देस वासी थी गुज़ारि,
देस वासीअ खां वधो, दुनिया वासी थी निहारि,
घरि नज़र पुख़्ती परेरी, तू बि रहु मां भी रहां ॥२॥
तंगि मज़हब में न माप्, क़ौमियत में आह जे,
भाइपीअ, इन्सानियत, रूहानियत में आह जे,
छदि दुईअ जो बोझ भेरी-तूं बि रहु मां भी रहां ॥३॥
पंहिंजे शाही महिल मां, घटि में कंहिं हिक कोठिड़ी,
जे अजे नू आहिरे सइ, पथरी ठही सौ झूपिड़ी
करि तमन्ना घटि तिखेरो, तूं बि रहु मां भी रहां ॥४॥
तुंहिंजे दस्तर ख़्वान तां बकी बक्ने मक़िराबु थो,
वासक़िमुफ़ीअ जे हथां केकी निमे बरिबादु थो,
तोंहिंजे करि चौकसि घड़ेरी-तूं बि रहु मां भी रहां ॥५॥
इशिरती प्यासे मां तुंहिंजे वूंद जे हिकिड़ी बचे,
हूंद शाना अन्न जा थो वूत गरिबा में मचे,
पिए बचति मकत मलेरो-सू बि रहु मां भी रहां ॥६॥
बाग़ अशिरत तुंहिंजे मां जे पूर फ़ज़नि जा वणनि,
जे भिस्मुनि भूगनि भिखुनि जा हूंद भी सोक़ा पवनि,
समुझ रखु सालिमु सवेरी-तूं बि रहु मां भी रहां ॥७॥
मुल्क गोरीअ जी हवसि ? हिम पेट भिस्ता जे समे !
खहु हारण जी इच्छा ? बेवसि सम्पता थे समे !
रोशु रोशन में अधेरो ! तूं बि रहु मां भी रहां ॥८॥

———

॥ विशाल हृदय

संसारमें रहकर अपने हृदयको विशाल बनाओ। तुम भी रहो और मैं भी रहूँ। अपनी मनोवृत्तिमें परिवर्तन लाओ—तुम भी रहो मैं भी रहूँ।

यदि कौटुम्बिक सम्बन्ध न होनेके कारण तुम्हारे वैयक्तिक जीवनमें स्थान नहीं, तो भी सहानुभूतिपूर्ण हृदयके किसी कोनेमें थोड़ा (स्थान) तो दे दो। 'तेरी' और 'मेरी' को कुछ सीमित कर 'तुम' भी रहो,'मैं भी रहूँ।॥१॥

यदि प्रान्तवासी नहीं हो, तो भला देशवासी बनकर रहो। देशवासीसे बढ़कर विश्ववासीका दृष्टिकोण धारण करो। अपनी दृष्टिको दृढ़ और विश्वास-पूर्ण बनाओ। 'तुम' भी रहो 'मैं' भी रहूँ। ॥२॥

तंग मजहबोंमें सीमित न हो जाओ। राष्ट्रीयताका स्थान दो,भ्रातृत्व, मानवता तथा आत्मिकताको स्थान दो। द्वैत भावनाकी मलिन दृष्टिका त्याग करो। 'तुम' भी रहो 'मैं' भी रहूँ ॥३॥

यदि अपने विशाल प्रासादमें एक कोठरी भी खाली कर दोगे, तो वह घर जैसे निराश्रितके लिए एक झोंपड़ी बन जाएगी। अतः अपनी तीव्र तृष्णाको जरा सीमित करो। 'तुम' भी रहो 'मैं' भी रहूँ। ॥४॥

तुम्हारे भोजनकी चौकेमें जो व्यय किया जाता है अपव्ययके कारण जो कुछ बरबाद होता है उसपर ठीकसे चौकसी रखो। 'तुम' भी रहो, 'मैं' भी रहूँ। ॥५॥

तुम्हारे विलासी प्यालेमें यदि एक बूँद भी बाकी रह जाए तो वह अनाजके दाने बनकर किसी गरीबकी खाद्य सामग्री बन जाएँगे। यह बगीचा सुन्दर बगीचा बन जाएगी। 'तुम' भी रहो मैं भी रहूँ ॥६॥

तुम्हारे वैभव और विलास पूर्ण बगीचेमें यदि कोट और दीवार हो बन जाएँ तो वे बिना दीवारोंकी झोंपड़ियोंके लिए घर बन जाएँगे। अतः अपनी समझ सन्तुलित और सच्ची रखो। 'तुम' भी रहो 'मैं भी रहूँ। ॥७॥

नेत्रोंकी हृदय करमकी तृष्णा! जब पेटकी चिन्ता सता रही है तब पावकी इच्छा! सभ्यताके युगमें! प्रकाश पूर्ण दिनमें यह अंधेरा!! 'तुम' भी रहो 'मैं' भी रहूँ। ॥८॥

८ इन्सानु

जे हुजे ज़ाति खे हा पाणु छिपाइण जो ख़ियालु,
कीन हरगिज़ हा करे तोखे बनाइण जो ख़ियालु।
रब्ह तुंहिंजे खे करे नूर मां ज़ाहिर हा पवा,
जे हुजे खेसि न हा भेद बनाइण जो ख़ियालु ॥१॥
झिलिकिलि आईने मां तुंहिंजे थी रबजोत थी बखे,
माहे ही पाण बिना पाण पसाइण जो ख़ियालु ॥२॥
थी मुभबत थे तबहिं जोति बभी मन्दा बधी,
हो तबहिं ख़ाकि में क़ुरबीब समाइण जो ख़ियालु ॥३॥
सो में पयबां तबहिं प्रेम भरी दिलि थे भरी
हो तबहिं प्यार करे खेसि मिलाइण जो ख़ियालु ॥४॥
इश्क़ धारां न हुजे दिलि ते हुकूमत कंहिंजी,
हो न ताक़त सां को क़ुदिरत खे बचाइण जो ख़ियालु ॥५॥
तुंहिंजे रचिना ते रख्यो हुस्न पे छा ऐन कमालु,
जोड़ तुंहिंजे ते उन्यो प्रिति पचाइण जो ख़ियालु ॥६॥
बरम हुस्नीम थे मिली रगति ऐं रीनक़ तोखां,
तोते थो मौजि रख्यो रच रचाइण जो ख़ियालु ॥७॥
सारी मख़लूक़ जे आख़िरमें तो इन्सान भयो,
साफ़ु साबितु कयो सरताज सजाइण जो ख़ियालु ॥८॥
आहि संसारमें इन्सान! उजालो तोखां,
तोखे थो आहि भला पाणु मल्हाइण जो ख़ियालु! ॥९॥
का बि मारो न भटक आहि जे 'बेवसि' न बणीं,
आहि दुनियामें मगरि धूम मचाइण जो ख़ियालु ॥१०॥

———

८ मानव

यदि परब्रह्मको अपना आपको अप्रकट रखनेका ही विचार होता, तो वह कदापि तुम्हें निर्मित करनेका विचार ही नहीं करता !

तुम्हारी आत्माको अपने प्रकाशसे वह क्यों उत्पन्न करता यदि उसे अपना रहस्य खोलनेका विचार न होता। ॥१॥

तुम्हारे ही दर्पणसे स्रष्टाका रूप मुखरित हो रहा है तो क्या इससे अपने आपको प्रकट करनेका उसका विचार नहीं झलकता ? ॥२॥

जब उसकी ज्योतिसे मानव बुद्धि प्रकाशित हो उठी तब सूर्यका विचार रज-कणोंमें समानेका था। ॥३॥

प्रभुने जब तुममें प्रेमपूर्ण हृदय भरा तब तुम्हें विच्छिन्न कर अपने आपमें समानेका विचार था। ॥४॥

प्रणयके सिवाय किसीका भी हृदयपर शासन नहीं चल सकता। इसमें शक्ति द्वारा प्रकृतिको दमन करनेका विचार न था। ॥५॥

तुम्हारे निर्माणसे सौन्दर्य पराकाष्ठापर पहुँच गया। स्रष्टाका तुम्हारी सृष्टि द्वारा ही प्रेमको परिपक्वावस्थामें पहुँचानेका विचार था ॥६॥

तुम्हारे द्वारा ही इस सृष्टिको शान-शौकत और ओजस्विता प्राप्त हुई है और तुम्हारे द्वारा ही (लीलामयकी) लीला रचनेका विचार उभर उठा ॥७॥

ऐ मानव ! सारी सृष्टिके अन्तमें तुमने उत्पन्न होकर मुकुट-मणि होनेका विचार प्रमाणित कर दिया ॥८॥

ऐ मानव ! तुमसे ही इस संसारमें आलोक उद्भासित है, भला कभी तुम्हें अपनेको सफल बनानेका विचार आया ! ॥९॥

यदि तुम्हारा विचार संसारमें धूम मचानेका है तो कोई भी बाधा तुम्हारे सामने टिक नहीं सकती, यदि तुम अपनेको 'बेबस (लाचार) न बना दो ॥१०॥

---

९. पोटभातु

थो रूपे मां केच माणे तुंहिंजो साखो हमु शरीफ़,
दस्तकारीअ में विलायत आहि जो ' हुनिरी हरीफ़
पर्सो पाबुनि सां तुंहिंजे थोद जो पाए शरीफ़,
पो पसे रत से रखी ऐं चून ते तुंहिंजे शरीफ़,
चरि सराहत मां जपाए पाण थो बे चरि रहीं,
बेगिरहि बेगरि महीं ऐं बे समव बे घर रहीं ॥१॥

थाअ बाबूरे न थोह्यो तुंहिंजे कोहो आनि थे,
ये बिस्या काइन करण थी कोन दमु पूफ़ान थे
माहि सरिविमुनि खां सियाम्बो तो अजबु इस्लाम थे,
थो सघे कोरे न गरिम्मुनि जो असत ईमान थे
मनि पथर ठिर्मंबो रहे या बर फ़ुड़ो बसबो रहे,
मुहु मपरि हुसंबो रहे, हुब हुाग में गसबो रहे ॥२॥

थी पतंगु थो पानि सारे समद शाहूकार ते,
फ़ुरि रहो मांबो तो मांबी मौभ मुईबार ते,
गुल घरे बेबिलि ते भेटा, फ़ुलि रहीं फ़ुरि पार ते,
तोसे बेसुरितीम रसायो आहि हामवि थार ते,
तुंहिंजी महिम्मत थे समर ते आहि पिपक बेपाकी मलि,
आहि रख्यो तोपे मुकमु ऐं पाम थे सामो मचलि ॥३॥

माउ ! बिसु थोतिय नचर सां थोसि हिम हुमजी तरी,
आहि सचो संसारमें कंहिंजी न मबताई सरी,
फ़िमं न आहे बटत थे बहितरि निशानमि सां मरी,
मास, धन, इजत ते आहे सोम सोम उमजी तरसरी
जपु, जमी जाणू मशरि सां घरि मसीमनि ते नचर
का बजा, पूरब-पछम में आहि पोड़पतजी पचर ॥४॥

९. श्रमिक



ओ मजदूर! तुम्हारा यह पवित्र दायाँ हाथ मानों कनस पैदा करता है। हे वीर! तुम्हारी इन प्रसादपूर्ण भुजाओंसे ही बलहीन शक्ति प्राप्त करता है, तुम्हारे ही रक्तसे सबकी शरीरका पोषण होता है। इस खेती-बारीसे खूब धन उत्पन्न करनेपर भी तुम निर्धन ही रहते हो। तुम बेगारमें पिसते हो और निराश्रित होकर बेघर बने हो। ॥१॥

तुम्हारे इस लौह कार्यको वायु तथा बवण्डर विचलित नहीं कर सके। तुम्हें कायर और उदासीन बनानेका तूफानमें दम नहीं है हे विचित्र प्राणी शिशिर और हेमन्तकी ठिठुरन तुम्हें कम्पित नहीं कर सकती और न भीषण ग्रीष्म ही तुम्हारे विश्वासको डिगा सकता है। भले ही पसीनेसे तर बतर हो जाओ अथवा मूसलाधार वर्षा होती रहे, फिर भी तुम्हारा मुख हँसता ही रहता है और शरीर श्रमसे घिसता रहता है ॥२॥

पतंग बनकर साहूकार रूपी शमापर तुमने अपनेको जला डाला। स्वयं दुखी रहकर तुमने पूँजीपतिके लिए आनन्द उपजाया। तुम हृदय-हीनपर फूलोंकी भेंट चढ़ाकर स्वयं काँटोंपर ही प्रसन्न रहते हो। अज्ञानने ही तुम्हें इस अन्यायपूर्ण अवस्थामें डाल दिया है। तुम्हारे परिश्रम रूपी पेड़पर सत्यानाशोंकी बेलने अधिकार कर लिया है जिसने तुम्हारा शोषण किया और स्वयं हरी भरी बनी रही। ॥३॥

इस दाएँ हाथकी हथेली खोलकर अपनी आँखोंसे ज्योतिष देखो जिसके बिना इस संसारमें किसीका भी निर्वाह नहीं हो सकता किस प्रकार यह सौभाग्यपूर्ण चिह्नोंसे सुशोभित है। और देखो कि वैभव धन और सम्मान पर उसने विजय प्राप्त कर ली है। उठो और उठकर ज्ञान-पूर्ण दृष्टिसे अपने भाग्यपर दृष्टिपात करो। आज पूर्व और पश्चिमके प्रत्येक स्थानमें श्रमिककी ही चर्चा है। ॥४॥

१० हाइ हारी!

तुंहिंजे तस्वीर मंझां क़ौम जो कुम्लाइ बजे
तुंहिंजे फ़रियाद मां बेदादि जो बर्ताउ बजे
तुंहिंजे तारीख़ मंझां माम जो ईजाद बजे,
माठि तुंहिंजे मां पखबिसाकु जो पोशाक बजे,
जानि जिंदु पोंहिची अफ़ाउनि में पधारे गारी,
तबि विसायत पी अम्मां विम्ह न तो हारी, हारी! ॥१॥

पी उमो झंधो तो रोंबनि में कई चेसि कुबी,
पेर पाणीअ में टुबिया, जानि पसीनें में टुबी,
जिबगी तुंहिंजी रिसायत सपाटुनि में सुकी,
जिस्म खे साफ़ु करण लाइ न साबुणो सुखी,
मूंखी मर्खनि में पई मौत जी सबसो पीं शिकार,
प्यो सक़ोमीम जे सबबि तो में बवाउनि लाइ धिकार। ॥२॥

तो बिना पोखे घणा, पर न पया फूल फणा,
जे रङा न रङण जा से बर्बया सदतु घणा,
तुंहिंजे गुंबियुनि में धिड़्म लाइ पघाई हा घणा,
मालु पाजी प्यो, पहुंचा बाकी तुंहिंजनि जा के कणा,
जींहिंजे रत साणु रची, फूल सां पसिजे पो करोड़ु
हाइ! बेकुलु रहे पाण सो हुमिरी पें हरोज़ु। ॥३॥

पहुच तुंहिंजे जा अमीरदार सदा माहि परे,
मोट यगरि जे समे पादि मदेरो जो करे,
छोत उन वचित सबसि तोखां सबाइ पीं न सरे
मनु टिपाइण लाइ सेयो तोखे विमासमि सां मरे,
पहिंजो तास्त जो जरो माणु न हारी सोचे,
फ़र्ज़ु पासों पो, हरनि जाण न हारी सोचे! ॥४॥

१०. हाय किसान !

तुम्हारे आहतिसे तुमपर जाति द्वारा किया हुआ अन्याय झलक रहा है। तुम्हारी फरियादमें तुमपर किया हुआ अन्यायपूर्ण बर्ताव झलक रहा है। तुम्हारी दुर्दशामें आम लोगों द्वारा तुम्हें दिया हुआ कष्ट झलक रहा है। तुम्हारी चुप्पीमें भयानक आवाज उठ रही है। तुमने अपना तन तथा जीवन परिश्रममें पिघलाकर गला दिया तब भी हिम्मत रखकर ए किसान! तुमने अपना मन नहीं मसोसा ॥१॥

तुमने सीधे खड़े रहकर और झुककर रोपनमें अपनी कमर टेढ़ी कर दी। तुम्हारे पाँव पानीमें डूबे और शरीर पसीनासे तर हो गया। तुम्हारा जीवन गन्दगीकी चपेटें खाता रहा। शरीरको स्वच्छ रखनेके लिए तुम्हें साबुन तक नहीं प्राप्त हुआ। भयानक बीमारियोंसे घिरकर तुम्हें मौतका शिकार बनना पड़ा। गरीबीके कारण तुम दवाइयोंको भी धिक्कारने लगे ॥२॥

बो-बोकर तुमने बहुतोंको अनाज दिया लेकिन अपने पोषणके लिए तुम पूरा दाना भी सुरक्षित न रख सके। तुम्हें कठोर चने ही चबाने पड़े। तुम्हारे खलिहानोंमें घुसनेके लिए बहुत लोग थे माल तो साफ हो गया और तुम्हारे लिए भूसी और छिलके ही बचे। जिसके रक्तसे रबी और खरीफका पोषण होता है। अफसोस वह परिश्रमी बिना दानेका ही रह जाता है। ॥३॥

जमींदार तुम्हारी पहुँचसे बहुत दूर है लेकिन वोट और बेगारके समय वह तुम्हें खूब याद करता है क्योंकि उस समय तुम्हारे बिना उसका काम नहीं चल सकता। अपना काम निकालनेके लिए वह तुम्हें तरह-तरहकी दिलासाएँ देता है। हे किसान! तुम्हें अपनी शक्तिका किञ्चित् भी बोध नहीं है। तुम अपने कर्तव्यका पालन तो करते हो लेकिन तुम्हें अपने अधिकारोंका भान तक नहीं है ॥४॥

घोर उन्हिहि जे जिनहि पेट में प्रकाशु बसे,
सरसु बट सोझ, थो सूफ़ान जो इमकानु बसे,
वर्षु, हुव पहिंजी रूपे, रूपु शाफ़ा जो जो पसे,
वासि 'बेवसि' ते गमूयो दस्तु भी कुदिरत जो रसे,
तो बइ आकाश भर्या गजंदा बादल था अचनि,
महिर जो मींहु वसो गजंदा बादल था अचनि। ।।४।।

घोर अन्धकारके अन्तःकरणमें ही तो प्रकाश बन्द रहता है। हवाके रुक जानेपर जब सख्त गरमी पड़ती है तो तूफानका अन्देशा रहता है। दुःख अपनी सीमापार करनेपर ही स्वास्थ्यका रूप देखता है। नितान्त बेबस अथवा निरुपायकी सहायताके लिये ही कुदरतका सहायक हाथ पहुंचता है। तुम्हारे लिए आकाशसे गरजते हुए बादल आ रहे हैं दयाकी वृष्टि लिए गरजते हुए बादल आ रहे हैं ॥५॥

---

२१ किथे इतिहासु ?

एकता जा बेविता ! तुंहिंजो सहीं मन्दर किथे ?
जंहिंमें इतिहासी उजालो आहि सो अंबर किथे ?
हरिबबरि प्यो शाहुसा तो बिनु उमेदुनि जो महासु,
ग्रास भावारीम सड आहे बठको बेवस किथे ? ॥१॥

प्यो मर्बी सूफ़ानु ज़िंही, समुंड्र छोली मार प्यो,
किमं मिलनि मस्तव जा मोती, शान्ति-घर सागर किथे ? ॥२॥
किअं फ़साबी कूनु बेंबो क़ौमियत जे फ़लक मां,
नम्व ते नश्तर किथे धारियाल ते खंजर किथे ? ॥३॥
समुझ सालिह ते तमीजी ऐं बिमारी चोट से,
थो पुगी पहुचे बंगण सड सोम जो अम्निगर किथे ? ॥४॥
अग्र जा चोपा चड़पा वुनि गर्ज चश्मनि जे मथां,
किअ मका हबो मजर में "पष किथे ऐं धव किथे ? ॥५॥
अहिव शाहाणा फिरनि था मतिसबो महिबर उसे,
आहि अक्लियारीम जे बाकनि में बाईम बर किथे ?॥६॥
जहि मां गुज़िरी आम जो मासूबिगोम में प्ये गुजर,
हिसिमियारोम जो जहान में सो बयासू बर किथे ? ॥७॥
मासु चबेबाज तुंहिंजो था तकिनि आकास तां,
सेमु चुंहिबुनि मां चबनि प्या "भलि त विकबे मर किथे ? ॥८॥
बक्तो तासीर मुहिबत सां करे जो लोहु, करि,
प्रिति जो पारसु पहणु सो कुब कीम्यागर किथे ? ॥९॥
जो मिसाए मुफबनि पे मुर्बबी मसाप में,
सो हुबमल वतनीम जो 'बेवसि उसिबो ऐं ओहर किथे ? ॥१०॥

---

११ एकता कहाँ?

हे एकताके देव ! मैं तुम्हारा मन्दिर कहाँ पाऊँ?
वह हृदय कहाँ है जिसके अन्दर एकताका प्रकाश है?

ऐ मल्लाह! तुम्हारे बिना आशाओंका जहाज भटक गया है। स्वतन्त्रताके लिए आशाएँ भी उठ रही हैं लेकिन लंगर डालनेके लिये बन्दरगाह कहाँ है? ॥१॥

बड़े ही जोरका तूफान उठा है समुद्रकी लहरें उछल रही हैं। लेकिन उद्देश्यके मोती कैसे प्राप्त हो सकते हैं क्योंकि शान्तिपूर्ण सागर कहाँ है? ॥२॥

राष्ट्रीयताके नशासे यह विषाक्त रक्त कैसे दूर होगा? क्योंकि नस्ल और जातियोंके लिये नश्तर कहाँ है? ॥३॥

शुद्ध बुद्धि सच्चरित्रता और मस्तिष्ककी उदारतापर भी लोभ रूपी अजगर हावी हो जाता है ॥४॥

स्वार्थी आँखोंपर अन्धकारका परदा पड़ गया है फिर भला अपना और पराया क्योंकर दृष्टि गोचर हो! ॥५॥

स्वार्थकी धुरीपर राष्ट्रोंकी सन्धियाँ भी पलट रही हैं। अधिकारोंके शोर-गुलके सामने वचनकी टेक कहाँ? ॥६॥

जिससे जनताकी आजीविकाका सुखपूर्वक निर्वाह हो सके, मनप्रमाणका संसारमें ऐसा कृपा पूर्ण द्वार कहाँ है? ॥७॥

आकाशमें परवाले तुम्हारे मांसपर आँखें गड़ाये बैठे हैं। अपनी तेज चोंचोंसे कह रहे हैं 'कहीं लड़-झगड़के अभी ही मर जाओ।' ॥८॥

अपनी प्रभावपूर्ण मैत्रीके प्रभावसे जो लोहेको सोना बनाता है। प्रेमका वह पारस पत्थर और प्रेमका वह रासायनिक (कीमियागर) कहाँ है? ॥९॥

जो मनुष्यमें एकत्व स्थापित करे वह स्वच्छ प्रेमका जज्बा और जौहर कहाँ है? ॥१०॥

१२ सी

पाणि पहिरत जे भयो जो शौक़ु प्यो इज़िहार जो,
हुस्न हिरिसाइण लइ पहिर्यो पाण पोशो मारि जो ।

पुरसु प्रहली ठही पाती सिफ़ातीअ मां पिया,
प्यो तमाशो तुतु पारी बीच ऐं बीबार जो ॥१॥

पी मसोमी हीर मारी मुहिबती मुखिड़पूं टिड़पूं,
बस्त जो बाने बर्यो प्यो सिलसिलो ससार जो ॥२॥

पस्टिजी प्यो पिर्ति जो पीपो खियाबह हिक तरफ़ि,
प्यो प्रचानो मनु पमानो इश्क़ जे इसिरार जो ॥३॥

सूह जो सोने मग्ये में मम जो मोती जड़पो,
कमु निचाकतवार पी प्यो बस्त जे बींझार जो ॥४॥

प्यो मुशासिक़ मुहिबु मारी खोर जो पें प्यारि जो,
मामिलो मुश्किलु मयो प्यो सोम जो ऐं हार जो ॥५॥

हिक नगर जे पोट केर्मा कोट मगिली शाण पा,
पोट बम पमन पां रयाबह हुस्न जे हृपियार जो ॥६॥

बरि नगर जी बाहि मड़िको, प्यो सत्या सागर घुली,
हिक लहिरं सां लुड़ु बयो, प्यो तार बसि बविकार जो ॥७॥

कोतिजी पुणि प्यो चितोरो कोटु जो मन बीतु हो,
पर सत्या पे कोट पद्मिणि पे न प्यो बिगु बार जो ॥८॥

छा मेंवाईम जे मजालि माहे छपर मणि जो पणे,
तामु बिमिसोअ पां ज्यारह तेज जे तलिवारि जो ॥९॥

रमीअ जे गुप्तु बखिबानिमें पणो क्रूहो मसर,
पो कटे बिसी जे सिवफ़ मां मोतो निगु मोबार जो ॥१०॥

१२. स्त्री

जब ब्रह्माको अपने आपको प्रकट करनेकी लालसा उत्पन्न हुई तब सौन्दर्य से रमानेके के लिए उसने स्त्री वश धारण किया।

निराकार और साकारके सम्मिलनसे पुरुष और प्रकृतिका प्रादुर्भाव हुआ, जिससे शीघ्र ही द्रष्टा और दृश्यका समारम्भ आरम्भ हो गया ॥१॥

प्राची से मलयानिल के बहने से प्रमिल मुकुल मुकुलित हो उठे। संयोगकी विजय हुई और ससारका समारम्भ हुआ ॥२॥

प्रम का पलड़ा एक ओर विशेष रूप से झुका और नारी हृदय प्रेम के चमत्कार की निधि बन गया ॥३॥

सौन्दर्य के स्वर्णाभूषण में लज्जारूपी मौक्तिक विजड़ित हुआ और संयोगके मौक्तिक-बंधनका कार्य विशेष रूपसे निखर उठा ॥४॥

वक्र और अन्यायका विरोधी संघर्ष आरम्भ हो गया जिसस विजय और पराजयका व्यापार कठोर हो उठा ॥५॥

दृष्टिके एक ही आघातसे भक्ति और ज्ञान क प्राचीर का पतन हुआ। सौन्दर्य के अस्त्र की शक्ति जर्मन-बम स भी शक्तिशालिनी सिद्ध हुई ॥६॥

जब पाप-दृष्टि की आग भड़की तो सतीत्वका सागर आलोड़ित हो उठा। एक ही लहरसे घोर शान्त हो गया और शान्त हो गई पापीकी ज्वाला भी ॥७॥

यद्यपि चित्तौरका अजेय दुर्ग विजित हो गया फिर भी पद्मिनी क सतीत्व के दुर्गका बाल तक भी बाँका न हुआ ॥८॥

पाप पूर्ण वासनाकी हस्ती ही क्या कि जो सतीपर आँख उठा सके। सती के तेज रूपी खड्ग का प्रकाश बिजली से भी अधिक है ॥९॥

नारी की गुप्त भावनाएँ बड़ी आत्मस्विनी होती हैं। वह अपने हृदय-शुक्तिस नित्य नए मोती उपजाती है ॥१०॥

बेहु जा रोशनु डियी थी पाण मां पिरियहु करे,
थो अंधारो गुमु करे अज्ञान खे अंधिकार जो ॥११॥

प्रेम-जल अन्दर मथां निर्मलु कमल थो गुलु रहे,
खिलि मिलन मां बासु डिये नितु हुब खे हुबिकार जो ॥१२॥

गर्भबस्तो पर्बमें धारे पलोभ जी मूरिती,
डिसु पिता सां थो मिले मकसिरि मुहाडो बार जो ॥१३॥

कुब सां कुर्बानि मारमें बामि थो थोयों घुमे,
सस मथों रमसो भोअणु 'बेवसि' सदा उपकार जो ॥१४॥

वह अपने भीतरसे संसारके प्रकाशमान दीप-स्तम्भ प्रकट करती है और अज्ञानके अन्धकारका विनाश करती है ॥११॥

उज्वल प्रेम-जलके ऊपर निर्मल कमलका वास रहता है। उसका सहानुभूतिपूर्ण कोमल हृदय प्रेमकी सुगंधसे संसारको सुवासित करता है ॥१२॥

गर्भावस्थामें गर्भमें वह पतिकी ही प्रेमपूर्ण प्रतिमा धारण करती है, जिससे प्राय: पुत्रका रूप पिताके सदृश ही हुआ करता है ॥१३॥

वह प्रेमकी बलि वेदीपर अपने आपको प्रेमपूर्वक न्यौछावर करती हुई विचरण करती है 'वेदमि' कहते हैं कि उसका नित्य उपकारपूर्ण जीवन यशस्वी है ॥१४॥

१३ शाहूकारु

सासु प्यो तुँहिंजो पुराणो, कँहिंजे खोह छाणि मां,
चूनु विझि कँहिंजो बचे थो, तुँहिंजे गिम गाड़ाणि मां,
आहि तरि शामाने अशिरत कँहिंजे अखि आसाणि मां,
सासु राहत जो चसे थो कँहिंजे तन्दुनि ताण मां,
कोहि कयो तो नरमखे खे मुफ्त बाझ माणियार?
आहि सा गुरबित गरीबी, शर्म शामत जो शिकार ॥१॥

किर्म न रत-चूसे जोर खे खोकु प्यो साईं सदे,
चूनु चेप जो करे शरिशी विस्यूं खासी छदे,
चूम जे सुर्खीम सां चुगु हीण्युनि हड्डियुनि थारो गदे,
शीन महर्मूं शाहिर चू थो रिशवती राजो थदे,
माथि परथर विझि जो शाहिद-कर्जु पत्थर आह जो,
सोजु सुर सुर में समायसु सर्दु सुर मे थाअ जो ॥२॥

तमअ हद हद्दिनू सबबि, जगासु फ़ितुइ ऐं फ़रियाद
तुँहिंजे मसुवाड़ो मुहिबत, थे उपाया बेशु भार,
फाहिनी भगिरत जे आबत सां बपायुइ हर विकार,
तुँहिंजे टाँहिकनि ते हझारें चअम माहिनि मसक बार,
जिअं बण्यो मनु, मासु कतिजो मानु शाहूकार जो,
तिअं बण्यो दुनिया में शाइस बार जे भाआर जो ॥३॥

फूस फल सां एतिबंबर विसु पम्यो होअ पेट पाल,
जिति बणे पाखिड़ी, धर्मी, उति थोटि खे कहिंजी मजाल,
तोखाईं शापथि जम्यो मुन्फ़िस-मुआरे जो मुआल,
तुँहिंजे पुठि गर्वाअ वई जीवति ओमथ एवनि पेमास,
खोह धां बधि पोइ छे सोड़ो कयो तो सोड़ सां,
सिर सटियइ सहसें सखोमो, पुरिअ खोही खोड़ि सां ॥४॥

१३ धनवान



तुम्हारा यह लाल दुपट्टा किसके खूनसे सुन्दर बना है ? तुम्हारे लाल गालोंकी लालीसे किसके हृदयका खून प्रकट हो रहा है ? किसकी आँखोंकी आर्द्रतासे तुम्हारे इस वैभवका पल्ला तर है ? किसकी आँतोंके तननेसे तुम्हारा यह आनन्दपूर्ण साज बज रहा है ? ऐ मुफ्तखोर ! तुम जैसे नर मक्खी (शहद) को किसने वैभवशाली बनाया ? वह है अबोध विपन्नता जो लज्जा और विपत्तिका शिकार बनी हुई है ।।१।।

आश्चर्य है कि इस रक्त चूसनेवाली जोंकको 'स्वामी' के नामसे सम्बोधित किया जाता है यह वह है जो दुःखपूर्ण हृदयोंका खून चूसकर खाली कर देता है । यह रिश्वत रूपी राज खूनकी लालीसे कमजोर हड्डियोंका चूना मिलाकर नगरके नए-नए शीश महल निर्मित कर रहा है। उन्हीं बने हुए प्रासादोंके पत्थर उसके पाषाण हृदय होनेकी साक्षी दे रहे हैं और साक्षी दे रही हैं प्रत्येक स्वरमें समायी हुई ठण्डी आहें ।।२।।

सवहारा वृत्तिके कारण तुमने गरीबोंको कंगाल और ऋणी बना दिया । तुम्हारी इस मकान किराये की मुहब्बतने कइयोंको बेघर और निराश्रित बना दिया । इन्द्रिय भोगोंके सुख लेनकी आदतसे तुमने कई विकार बढ़ा लिए, तुम्हारे इन ठहाकोंके कारण हजारों आँखें अश्रु पूर्ण हैं ज्यों-ज्यों धनवानका धन माल पद और शान-शौकत आदि बढ़े त्यों-त्यों संसारमें वे अन्याय पूर्ण कष्टोंके कारण बन गए ।।३।।

फला-फूलोंसे लदी उदर पूर्ति करानेवाली इस पृथ्वीको देखो, जहाँ एक बीजसे खजूरका पेड़ पैदा हो जाता है वहाँ कमी की क्या मजाल ! तुम्हारे कारण ही शायद आजीविकाकी समस्या कठिन हो गई है । तुम्हारे ही स्वार्थने जीवन निर्वाह कठोर कर दिया है । आवश्यकतासे अधिक संग्रहकी इच्छासे तुमने लोगोंको तंग कर दिया है और आवश्यकता रूपी लोहेकी छड़ तुमने हजारों गरीबोंके सर पर दे मारी है ।।४।।

कर्मयोगी भी न तो कृषि कर्म की फुरसत बिठी,
वियस पकावट खां न पेसखों बठी, फरहत बिठी,
जिस बसर युग में मिठा माणे न सा मवत बिठी,
तंदुरुस्तीम थे न सासिमु निज की महमत बिठी,
जे रसे मजबूर बेवसि कहि बबेरे राज से,
हुव पहियें पुरि उत्तराखंड ते सोचे छवे ॥५॥

कर्मयोगी बनकर तुमने कभी कर्मकी कृपा ही न देखी और परिश्रमके कारण हुई थकावटसे आराम लेकर, तुमने कभी आनन्द ही नहीं लिया। किस प्रकार भूखमें प्याज भी मीठी लगती है इसका रसास्वाद ही नहीं लिया और न कभी स्वास्थ्यकी गहरी निद्राका मजा ही चखा ॥५॥

२४ हमिथर्धु गोढो

अचानक नयो विसि मंदरि मारिजू
"म धार्मां मंधर में पियां स्वरू
कयमि चाहु मां धारिसु मुस्तजु,
मने राहिबर या कि पूरनु गुरु
सची राह रोसनु सधे जो सभे,
हुजूरीअ में मूंखे वठी जो हुले ॥१॥

एलाए रस्मो भोळे-दिलि हरिब्दरि,
रहे पी मंदर में इहाई पचर,
न माई किथां भी बजी खुशि खबर
निहार्युमि घणो को न मायो नजर,
बुधण सां घणी मू कया कम बड़ा,
मगरि कींह बि सहजी न पहुती सदा ॥२॥

जटाधारी जोगी अचानकि मबियो
इसारे सां मोरे सिधो कींह सदियो,
चयाईं बिना योग धारो न थ्यो,
सिखणु योगु तहिंते जरूरी पियो,
घणा साल धारे बिठमि योग में,
मगरि मनु हो साम्यो विषय भोगमें ॥३॥

परी ब्रह्मज्ञानी मिलो सगु थ्यो,
चयाईं बिना ज्ञान रस्तो न थ्यो",
उन्हीअ खां बि सतिज्ञानु सिखिणो पियो,
रहणु ज्ञान में रातिडींहां पियो,
उन्हीअ राहमे पुणि न राहत मिली
मगी कथ में था कथा जी मिली ॥४॥

१४ सहानुभूतिपूर्ण अश्रु-बिन्दु

अकस्मात् मेरे हृदयमें यह इच्छा प्रकट हुई — 'बिना असमंजसमें न पड़कर प्रियतमके सम्मुख जाऊँ।' अतः बड़ी उत्कण्ठासे मैंने चारों ओर खोज की कि मुझे कोई पथ प्रदर्शक अथवा सच्चा गुरु मिल जाए जो मुझे प्रकाशपूर्ण सत्य मार्ग दिखला सके और मुझे मेरे प्रियतमके चरणोंमें उपस्थित कर सके ।।१।।

हृदयकी मेरी इस उत्कण्ठाने मुझे दरबदर कर दिया। हृदयमें यही लालसा बनी हुई है। मैंने बहुत ढूँढा, देखा लेकिन कुछ दिखाई न पड़ा और कहींसे भी यह सुसमाचार प्राप्त नहीं हुआ। सुननेके लिए मैंने अपने कानोंको खूब सतर्क किया लेकिन मेरे बुलानेपर भी कहींसे आवाज नहीं आई ।।२।।

अचानक एक जटाधारी साधु मिल गया जिसने इशारेसे मुझे अपनी ओर बुलाया और कहा कि योगके सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। अतः योग सीखना मेरे लिए आवश्यक हो गया। बहुत वर्षों तक मैंने योगकी साधनाएँ कीं लेकिन मन फिर भी विषयोंमें ही रमा रहा ।।३।।

फिर कहींसे एक बड़ा ज्ञानी सन्त मिल गया। उसने कहा— "ज्ञानके सिवा अन्य मार्ग नहीं है।" उससे भी मैंने सद्‌ज्ञानकी दीक्षा ली और रात दिन ज्ञान चर्चामें ही बिताने लगा। सत्कथाका उपदेश पाकर भी मुझे उस मार्गसे आनन्द प्राप्त नहीं हुआ ।।४।।

बरी ; कर्मकाण्डी वियो को मिसी,
चयाइ "क्रिया शुद्धि वपे पी मिसो,
तर्कड़ि मां विपुसि तीर्थनि ते हिसी
कपुमि रामु, ह्रनामु, जपु तपु विसी,
पयों कोन विर्तनि ऐं संताप मां,
छुटी कीन जिंदु, हाइ विलाप मां ! ॥५॥

बरी शौक मां प्युसि भगत बटि हुसी,
चयाईं त 'भगिती समिनिमें ससी',
वहुं पोइ त भगितीम में दिलि पे वसो,
मगरि राह पूरी म भगितीम सकी,
करे दांहं वर्दो पपुमि "छा कयां ?'
घणा हीम चन्नो कींहिमे दर ते घयां ? ॥६॥

अचानक मूं हिकु पूर-पुरिको चुघो,
चुघण सां हुमिवर्जु गोढ़ो गयों,
जहो माव जो हो वसो हिकु फुड़ो
समायलु फुड़े में सजो समुंडु हो !
उन्हीम समुंडमें "पाणु मुंहिजो वहो !
गगन में पियो गुण्णु पूंबर-गुड़ो ! ॥७॥

संचे रसु हुव थो त पे पुषि रवा,
पुवो फुलमें पी फ्रमा पिये वफ़ा
मिले माडं, सो में त पे इम्तहा,
रहे पी न मां ऐं न मेरा मुवमा,
वन्नो मास 'बेवसि' निपटु माणु पी
सुरी बेसुरीम में करे पामु पो ॥८॥

फिर एक कर्मकाण्डीसे परिचय हुआ उसने कहा—"केवल शुद्ध क्रिया अथवा कर्मकाण्डकी आवश्यकता है।" शीघ्र ही मैं तीर्थ यात्राके लिए निकल पड़ा। वहाँ पहुँच कर जप तप ध्यान स्नान तथा प्रेम-पूर्वक दान भी किया, लेकिन व्रतों और प्रायश्चित्तसे भी कुछ सिद्ध न हुआ और संसारकी हाय-हायसे जान नहीं छूटी ॥५॥

फिर बड़े ही प्रेमसे एक भक्तके पास गया। उसने कहा—'भक्ति ही सबसे उत्तम है।' वर्षों भक्तिमें अपने हृदयको रमाता रहा लेकिन भक्तिने भी पूरा मार्ग-दर्शन नहीं किया तब दुःखपूर्ण निःश्वास लेकर कहना पड़ा अब क्या करूँ? यह व्यथा मैं किसके दरवाजेपर जाकर गाऊँ ॥६॥

अचानक मैंने किसीकी कष्ट-पूर्ण कराह सुनी-सुनते ही एक सहानुभूति-पूर्ण अश्रु बिन्दु छलक आया। यद्यपि वह एक पानीकी ही बूँद थी, लेकिन उसमें समाया हुआ था सारा समुद्र! उस समुद्रमें मेरा अहम् डूब गया और यह दुःख-पूर्ण गुड़िया गगनमें समा गई ॥७॥

जब दुःख सीमाको पार कर जाता है तो वही औषधि बन जाता है। व्यष्टि समष्टिमें समा (फना) कर ही शाश्वत बनता है। जब 'मैं' 'तू' में समा जाता है तब निःसीमता आ जाती है तब ममत्व और वासनाएँ समाप्त हो जाती हैं और आशाका निराकरण होकर 'अहम्, ब्रह्म' में लीन हो जाता है ॥८॥

———

१५ आज़ादिगी

वाघरे कंडनि मंझां तुंहिंजो गुज़र–आज़ादिगी।
तो वसायो सख़्तु सो फ़ौलादु घर–आज़ादिगी।
जंहिंजे टोड़ण सां छपे आठो जिगिर–आज़ादिगी।
कंहिं मुसीबत जो न थिये जंहिंजे असर–आज़ादिगी।
मस्तु थी तुंहिंजे मथां इन्सानु थ्ये थो बेड़पो
जो बणी परिवानो दे थो तेजु आतसि में झपो ॥१॥

शख़्सियत जी गुप्तु शक्ती तो बिना निखिरे नथी,
फाटु खाई ज़िन्दगी, इन्सान जी निसिरे नथी,
रोगिनाई रूहजी ऊन्हहि मथां उभिरे नथी,
क़ौमियत नाकारिगर थी कंहिं तरह सुधिरे नथी
पाण ते भाड़णु ऐं सुहारीअ जो थो गुणु नासु थिये,
आत्मिक उन्नतीअ सेवो, हिक पासि गुणु थो नासु थिये ॥२॥

वसु दम्यसु निर्धंदु धुटधलु, तो बिनु ब़कुर बसाट माहि
राजिधानी रमिझ सां इन्साफ़ जो आहे कोटि माहि,
वाव सां बे वार जी वेसी अगावत बाट माहि,
टिमिकड़, फड़ि फड़ि करड़, बे जोति जीवत माठ आहि,
वाव खां वचियो थको थो, वर्दु विसि रंजूर में,
ज़ख़्मु जिसि सोहिब पिये थो, मेटि सो नासूर में ॥३॥

नूर मां तुहिंजी उथे थो वाहि सां मड़िणो हुमी
जा अलाए गालि ते अख़िबात गू थिणिगू हुमो,
जिमें मुफ़ासिक़ु वाउ छटिक, तिमें वरे तेखो थमी
कीन ठापुर थिये, थमे खेसी म रहिमत जी कनी
साठिमी नातो रहे हिन वाहि सां वसाति जो,
जिमें अंधारीअ सां ताइसू मा सहाईम राति जो ॥४॥

१५. स्वतन्त्रता

हे स्वतन्त्रते ! बबूलके कांटोंमेंसे होकर तुम्हारा मार्ग गया है। हे स्वतन्त्रते ! तुमने वज्रका घर बसाया है जिसको तोडनेके लिए मजबूत हृदय चाहिए जिसपर किसीका भी प्रभाव न हो सके। मनुष्य तुम्हारे ऊपर मुग्ध होकर निर्भय बन जाता है और पतग बनकर तीव्र ज्वालामें कूद पडता है ।।१।।

तुम्हारे बिना व्यक्तित्वकी गुप्त शक्ति प्रकटित नहीं होती मानव जीवन प्रस्फुटित होकर निःसृत नहीं होता अँधेरेसे निकलकर आत्मिक ज्योति प्रज्वलित नहीं होती और तुम्हारे बिना राष्ट्रीयता असफल होकर सुधरती नहीं। तुम्हारे बिना स्वावलम्बनका बीज ही नष्ट हो जाता है और आत्मिक उन्नतिका गुण विशेष भी नष्ट हो जाता है ।।२।।

तुम्हारे बिना बकरेकी तरह दम और गला घुटता रहता है तथा राजनैतिक चतुरताके कारण न्यायकी जड ही कट जाती है। तुम्हारे बिना न्यायके साथ अन्यायका सम्बन्ध निकट हो जाता है और तुम्हारे बिना जीवन टिमटिमाती और फडफडाती लौ के समान है। दमनसे पीडित होकर हृदयकी पीडा दब जाती है और वह हृदयका घाव एक ग्नि नासूरके रूपमें प्रकट होता है ।।३।।

जब स्वतन्त्रताकी अग्नि बडे वेगसे भभक उठती है तो भावनाओंकी चिनगारियोंसे शरीरको झुलस देती है। ज्यों-ज्यों विरोधी वायु चलती है त्यों-त्यों यह तेज जलने लगती है। जब तक कृपा-वृष्टि नहीं होती तब तक यह (अग्नि) शान्त नहीं होती। इस अग्निसे बारिशका सम्बन्ध उचित ही रहता है जिस प्रकार अन्धकारसे चन्द्रिकापूर्ण रात्रिका ।।४।।

मोवि मासा में मिस्यल घातारवो ना घाति माहि,
एं वम्म ते वाँहिजे लइ हकिवार इन्सान वाति माहि,
वाँहिवा वधि संसारमें पुम्वव म का सोपाति माहि,
र्ताहिवे नितु रोपे रखपु वेवसि न वाँहिजो वाति माहि
अर्म वारा फ्रर्ता ते ईवा मवव मुक्तिफ्री वणो,
वव वारीम वाँहं ते क़ुवि वातु मार्णीवो धणी ॥५॥

माताकी गोदसे ही जो परवाम प्रभु द्वारा प्राप्त है और जो मनुष्यका जन्म सिद्ध अधिकार है जिससे बढ़कर ससारमें और कोई दूसरा उपहार नहीं उसको सदाके लिए रोक रखना किसीके बसकी बात नहीं है अर्शवाले (स्वगके) देवता गुप्त सहायता लेकर फर्श (पृथ्वी) पर पहुँचेंगे और दु ख-पूर्ण आहपर स्वयं भगवान न्याय बरसाएँगे ।।५।।

---

१६ पूजा मन्दरु

मुँहिंजो मन्दरु बि उते वर्व सदो मिति बेरो,
बर्ड्ड नहि माइ फिरे, मुँहिंजो उतेई फेरो,
पिङु मारे मां मिठीम लिड मां अध राति उपां,
डोरी वति पस्तु पुजां वर्व जो नहि माइ पेरो। ॥१॥
बे ट्री हुव मासु बि कमि आम जे खिजिमतमें अचे,
छोल कोरे ऍं कपे मास बिमां चौफेरो। ॥२॥
सोच बे माहू ततल वां मा जसप बिसि न सगे,
प्यो धार्मु उनजो पहिण वां न परो सरिसेरो। ॥३॥
पाणु आकाशमें दोवा बे उवायां अहिंजो,
मिसिसि अमका न समे मुँहिंजो किथे आबेरो। ॥४॥
तबइ हुमिवर जो एदो त मुशाबो पिङु पिये
ओहिंजो हरिजाइ मिए मकड़ु न पगारि किथि येरो ॥५॥
साहिणी सामु, सचाईअ सां ए 'बेबसि चिमिके।
बिसि कंपसु कॅहि बि मदाईअ सां न पिए दाल मेरो। ॥६॥

---

२६ पूजा-मन्दिर

मेरा मन्दिर भी वहीं है जहाँ पीड़ाका निवास है। जहाँ-जहाँ दुःख विद्यमान है, वहाँ-वहाँ मैं विचरता हूँ।

अर्ध रात्रिको अचानक मीठी नींदसे जगकर दौड़कर मैं वहाँ पहुँच जाऊँ जहाँ पीड़ाने अपने पाँव जमाए हैं ॥१॥

यदि यह मेरा मांस और अस्थियाँ जनताकी सेवाके काम आएँ तो क्यों न मैं उन्हें काटकर उनपर न्यौछावर कर दूँ ! ॥२॥

दुःखपूर्ण, सन्तप्त कराहसे जो हृदय जल नहीं उठता, उसमें और पत्थरमें किंचित् मात्र भी अन्तर नहीं है ॥३॥

मैं सेवाके आकाशमें इतनी ऊँची उड़ान लूँ कि 'अनक़ा' (पक्षी विशेष जो पृथ्वीपर नहीं बैठता।) की तरह मेरा कहीं घोंसला ही न मिले ॥४॥

सहानुभूतिपूर्ण हृदयका इतना विशाल क्षेत्र बन जाए कि उसका केन्द्र सर्वत्र हो और आधिकारिकता कहीं न हो ॥५॥

ऐ 'बेवसि', सादगी, सच्चाईसे चमक उठ, जिससे हृदय-कमल किसी भी बुरी भावनासे मलिन न हो ॥६॥

---

१० ग़रीबनि जी झूपिड़ी

जा आहि आडंबर म बसें बंगला जां,
चींढी न चोरिबारि जा गिरिबी अबे स्यास जां,
खोमो म जहिड़ो आहिड़ो बोछे अजास जां,
हल्को रहे जा हियांम ते सघलो संमास जां,
जहिं में पल्दरे पारि म सरासरि सये पिड़ी,
भला ! झुरे म ग़ाल ग़रीबनि जी झूपिड़ी ॥१॥

जा बठ बग्नों पी चीख जहिं नाभिकु नफ़्रीस जां
भाबी रहे जा ऋतु-गुबारे जे रस्युनि जां,
पुमि भी पनाहमें रहे-हासिब हरीस जां
धारे न ख़ासि फ़ौफु को कूनी बधोरा जां,
बे कुर्फ़ ऐं कड़े रहे सोधी सबूकिड़ी,
भला ! झुरे म ग़ाल ग़रीबनि जी झूपिड़ी ॥२॥

छांगे छना अविद्यार्थ जो मामुनि स्वानि मशां,
सादो मसो सिटपार्थ पुराणनि पढनि मशां,
काढो रूपार्थ कड़िब जे नामनि बढनि मशां,
पोड़ियो पिटपार्थ पाप ऐं सरितनि सढनि मंशा
मुफ्ती मदद त आया मधी मुड़ित पी मिड़ी,
भला ! झुरे म ग़ाल ग़रीबनि जी झूपिड़ी ॥३॥

जहिंते म मधन साव त जो माजु पो रहे,
राढो, दखणु, म जहिंते को मोहाप पो वहे
चूमे, पथर जा सिर जो म सिरि मार जा सहे,
'महिमूनु आह गाह जे हेठां म जा गहे,
ममुबाड़ वे मुहारजी माहे न जा पिड़ी
भला ! झुरे म ग़ाल ग़रीबनि जी झूपिड़ी ॥४॥

१८ गरीबोंकी झोपड़ी

जो जायदाद अथवा किसीकी मर्जीकी हालसे रहित है, जो गिरवी भी नहीं रखी जा सकती जो किसी अनिष्टकी आशंकासे भी मुक्त है, जो रक्षाके विचारसे हमारे हृदयके लिए भारस्वरूप नहीं है और जिसमें धन-वैभवका गर्व भी प्रविष्ट नहीं हो सकता हे प्रभु! ऐसी गरीबोंकी झोपड़ीको आँच तक न लगे ॥१॥

जो कोमल और मृदुल वस्तुओंसे दूर भागती है जो वैभव-पूर्ण आजीविकाके प्रलोभनोंसे मुक्त है जो ईर्ष्या और द्वेषसे रहित है, जिसे किसी खूनी और दुराचारीका भय नहीं और जो ताले आदिसे रहित होनेपर भी सुरक्षित है हे प्रभु! ऐसी गरीबोंकी झोपड़ीको आँच तक न लगे ॥२॥

छोटी-छोटी टहनियोंको काटकर छोटा-सा घर बनाया गया है, घास-फूस और तिनकों द्वारा साधारण आश्रम बनाया गया है, जिसके निर्माणमें स्वयं उन्होंने और उनके किसान परिश्रम किया है और बिना कोई मूल्य लिए किसान दौड़-दौड़कर सहायता की है हे प्रभु! ऐसी गरीबोंकी झोपड़ीको आँच तक न लगे ॥ ॥

जिसपर न तो नक्शा पास ही कराना है और न राज बढ़ई अथवा कुम्हार ही जिसपर परिश्रम करता है पत्थर, ईंट अथवा चूनेका भार जो सिरपर नहीं उठाती और जो 'गृह-कर' (House Tax) के भारसे पीड़ित नहीं है जो असुरक्षित किरायेदारके किरायेसे दबी हुई नहीं है, हे प्रभु! ऐसी गरीबोंकी झोपड़ीको आँच तक न लगे ॥४॥

सिमु चडु माग्र पो बिसे बोंहिबे बिम्पुनि मंसां,
तिरियपो मचनि चा तिरिरबिरा तारनि करपुनि मंसां,
मुचिका कवी मबे हुना बोंहुबे मिरपुनि मसां,
छिपिकाय मींहुं पो करे छुठिकी छिरपुनि मसां
अविरत संबी कमास, सिहृत काइ घुबिकी,
मसा ! मुरे म चाक परीबनि बी मूपिकी ॥५॥

जिसके विवरोंसे सूर्य और चन्द्रमा झाँकते हैं और ग्रह नक्षत्रोंकी किरणें फिसलकर भीतर आती हैं जिसकी दीवारोंसे वायु सनसनाती हुई दौड़ती है वर्षा जिसकी छतोंसे घुसकर छिड़काव करती है, जो स्वास्थ्यके लिए सुन्दर भेंट है, हे प्रभु ! गरीबोंकी ऐसी झोपड़ीको आँच तक न लगे ॥५॥

जिसमें ज्वार अथवा बाजरेकी स्वादिष्ट रोटीमें ही आनन्द माना जाता है और जिसमें सादा जीवन व्यतीत करनेके कारण किसी वैद्य हकीमकी जरूरत नहीं पड़ती। परिश्रम उनको दीर्घायु बना देता है। उनकी आनन्दोन्मत्ततापर तृष्णा अधिकार नहीं करती, जहाँ चिन्ताकी अग्नि मनुष्यको नहीं जलाती, हे प्रभु ! ऐसी गरीबोंकी झोपड़ीको आँच तक न लगे ॥६॥

१८ नवाई



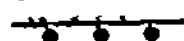
तुँहिंजी दुनिया में नवाईंअ जो सदा आहे मुक़ामु,
जँहिंजे सटिके ते रहे मौजमें हरि दिलि जी मपनु,
साफ़ु सवली थी गुज़र आइ सभे राह कठनु,
प्यो नवाईंअ ऐं बक़ा सां बि जियण सां जतनु,
अहिड़ी दुनिया खां जिते मौत जो माक पो वझे
जे नवाई न हुजे हूंद हुजी हरि को मजे ॥१॥

हुस्न जो आहीं ज़माने में तूं जबिरो हथियारु,
तुँहिंजे हस्तीअ ते रहे सूंहं जे हस्तीअ जो मदारु,
रूपजे राग मग्यां आहीं सुरीली तूं सतारु,
हर मिज़ारे जी नज़र नूरे नवाईंअ रे मिकारु,
जे न हरि दा ते हुजो छाप नवाई पँहिंजी,
हुस्न जोखे में विसे हूंद नवाई पँहिंजी ॥२॥

थो सवाईंअ ते नवाईंअ जो चवाँहि रंगु चढ़े,
सोन मुंडीअ में तवाँहि गोया को हीरो थो जड़े,
आदि हुनुर सी जो नमूने में नओं थादु घड़े
सी ख़िबामीअ में मगरि पर्त पुराई पढ़े,
प्यो पुरातन ते नवाईंअ जो चवाँहि वेसु वगो,
गरिथे मूंगो हो पुरो, ए.दु सो महिबूबु लगो ॥३॥

हेथि मज़ु माहि रहो कालह हुई मविरत जाहिथे,
इल्मु हो कान्हु, चवनि अज़ु था जहालत जाहिथे
ऐवु सायदि प्ये सुमी, मज़ु पो मिखावत जाहिथे
सा लिखे चीज़ न तम्दीस जी मावत जाहिथे,
गरिथे ए.वि यति हक़ीक़ीअ में फेरो थो मचे,
फ़र्क़ तमि रुप सवाईंअ में समेरो थो मचे ॥४॥

१८ नवीनता



तुम्हारे संसारमें सदा नवीनताका समारोह छाया हुआ है जिसके लालित्यसे प्रत्येक हृदय आनन्दमें मग्न रहता है। इस संसारमें शुद्ध और सरलतापूर्वक जीवन-निर्वाह कठिन हो गया है। जिसमें जीनेके लिए कठोरता पूर्ण यत्न किए जा रहे हैं जहाँ प्रति क्षण मृत्युका मारू बाजा बज रहा है ऐसे संसारमें यदि नवीनता न होती तो प्रत्येक व्यक्ति दुखी हो जाता ॥१॥

संसारमें सौन्दर्यका तू ही जबरदस्त स्तम्भ है। तुम्हारे अस्तित्वपर ही सौन्दर्यका अस्तित्व अवलम्बित है। रूप और रागके आगे तुम ही मुरली वीणा हो क्योंकि प्रत्येक दृश्यकी सुन्दरता नवीनताके प्रकाशके बिना निकम्मी है। ओ नवीनते! यदि तुम प्रत्येक वस्तुपर अपनी छाप नहीं लगाती तो सौन्दर्य अपने महत्त्वको भी विपत्तिमें पड़ा हुआ देखता ॥२॥

जब सत्यपर नवीनताका रंग चढ़ता है उस समय मानो स्वर्ण मुद्रामें कोई हीरा जड़ देता है। कला वही है जो नमूनेमें नई गठन गढ़े लेकिन नवीन वाणीमें भी प्राचीनताका पाठ पढ़ाए। प्राचीनतापर जब नवीनताका आवरण चढ़ता है तब वह गुड़िया पुरानी होनेपर भी बड़ी प्यारी लगती है ॥३॥

आज वही निस्सार है, जिसपर कल आश्चर्य प्रकट किया जा रहा था! जो कल तक ज्ञान समझा जाता था आज वही अज्ञान माना जा रहा है कल शायद वही दोष माना जाए, आज जिसे सुकुमारता प्राप्त है। वह वस्तु ही कहाँ है जिसमें परिवर्तनशीलता न हो? यद्यपि स्वयं जात हकीकी (ब्रह्म) में कोई परिवर्तन नहीं होता फिर भी सिफाती (साकार) अवस्थामें उसके रूपमें बड़ा परिवर्तन हो जाता है ॥४॥

१८ नफ़ाई

तुंहिंजी दुनिया में नफ़ाईअ जो सदा माहे मकानु,
जंहिंखे लटिके ते रहे मौजमें हरि दिसि थी ममनु,
साफ़ु सभनी थी गुज़र लाइ सगे राहु कठनु,
ज्यो नफ़ाईअ एं वफ़ा सां बि जियणु कोई जतनु,
महिंजी दुनिया जो जिते मौत जो माक थो वजे
से नफ़ाई न हुजे हुब हुजी हरि को मजे ॥१॥

हुस्न जो माहीं ज़माने में तूं जविरो हृथियारु,
तुंहिंजे हस्तीअ ते रहे सुहु जे हस्तीअ जो मदारु,
रूपजे राग अग्यां माहीं मुरीसी तू सतार
हर निगारे थी मगर मूरे नफ़ाईअ रे निखारु,
जे न हरि पा ते हुजी छाप नफ़ाई पहिंजी
हुस्न जोभे में विसे हुब नफ़ाई पहिंजो ॥२॥

थो सफ़ाईअ ते नफ़ाईअ जो जडंहि रंगु चढे,
सोन मुहीम में तडंहि गोया को हीरो थो जडे,
आदि हुमुब सो जो नमूने में नमूं थादु पढे
थी ज़िबानीअ में मगरि पत पुराई पढे,
ज्यो पुराणप ते नफ़ाईअ जो जडंहि वेसु वणे,
गरिचे मूनो हो गुवो, पूडु सो महिबूबु मणे ॥३॥

हृथि मगु माहि उहो कस्हु हुई मबिरत जंहिंखे,
दस्तु हो काल्हु, चबनि मनु था नहासत जंहिंखे
ऐबु सार्थदि ज्यो मुर्मा, मनु थो निफ़ासत जांहिंखे
सा थिये चीज़, न तम्बोल जी मावत जांहिंखे,
गरिचे पूदि जाति हुनीक़ीम में फेरो थो मचे,
फ़र्क़ु तथि रूप सफ़ाईम में समोरो थो मचे ॥४॥

१८ नवीनता

तुम्हारे संसारमें सदा नवीनताका समारोह छाया हुआ है जिसके सान्निध्यसे प्रत्येक हृदय आनन्दमें मग्न रहता है। इस संसारमें शुद्ध और सरलतापूर्वक जीवन-निर्वाह कठिन हो गया है। जिसमें जीनेके लिए कठोरता पूर्ण यत्न किये जा रहे हैं जहाँ प्रति क्षण मृत्युका मारू बाजा बज रहा है ऐसे संसारमें यदि नवीनता न होती तो प्रत्येक व्यक्ति दुखी हो जाता ॥१॥

संसारमें सौन्दर्यका तू ही जबरदस्त शस्त्र है। तुम्हारे अस्तित्वपर ही सौन्दर्यका अस्तित्व अवलम्बित है। रूप और रागके आगे तुम ही सुरीली वीणा हो क्योंकि प्रत्येक हृदयकी सुन्दरता नवीनताके प्रकाशक सिवा निकम्मी है। ओ नवीनते! यदि तुम प्रत्येक वस्तुपर अपनी छाप नहीं लगाती, तो सौन्दर्य अपने महत्वको भी विपत्तिमें पड़ा हुआ देखता ॥२॥

जब सत्यपर नवीनताका रंग चढ़ता है उस समय मानो स्वर्ण मुद्रामें कोई हीरा जड़ देता है। कला वही है जो नमूनेमें नई गठन गढ़ दे लेकिन नवीन वाणीमें भी प्राचीनताका पाठ पढ़ाए। प्राचीनतापर जब नवीनताका आवरण चढ़ता है तब वह गुड़िया पुरानी होनेपर भी बड़ी प्यारी लगती है ॥३॥

आज वही निस्सार है, जिसपर कल आश्चर्य प्रकट किया जा रहा था! जो कल तक ज्ञान समझा जाता था आज वही अज्ञान माना जा रहा है, कल शायद वही दोष माना जाए, आज जिसे सुकुमारता प्राप्त है। वह वस्तु ही कहाँ है जिसमें परिवर्तनशीलता न हो? यद्यपि स्वयं जात हस्तीकी (ब्रह्म) में कोई परिवर्तन नहीं होता फिर भी सिफाती (साकार) अवस्थामें उसके रूपमें बड़ा परिवर्तन हो जाता है ॥४॥

१९. गोठनि जो सुधारो

भारत में भए रस जो आणींदो सिधारो, गोठनि जो सुधारो।
छिन देश जा ठाहींदो ममूमोह नियारो—गोठनि जो सुधारो।

मन्दाणु घणो मुल्क जो गोठनि में बसे थो—बस्तयुनिमें बसे थो
भाणींदो असी तेकिड़ो मात्रमर्में उभारो—गोठनि जो सुधारो। ॥१॥

उजिड़्या थे हुनिर हिन्दू जा—धन्धा थे पिकाणा
जागाए घरी तिनि खे खिमारींदो दुवारो—गोठनि जो सुधारो। ॥२॥

बेहस्म रहनि अंध में—चूरि मुल्क में बधि थी
सहलीम खेई भाम, करो दूरि अंधारो—गोठनि जो सुधारो। ॥३॥

आपू बि बहियूं छूटि हुया, पर न सफ़ाई—बीमारि ममाई
इन्सान सिहत जा करो होथनि खे सधारो—गोठनि जो सुधारो। ॥४॥

जो पेट भरे पेट भुख्यो, अंग उघाड़ो—ओमन में फुराड़ो
कुड़िमीअ खे खेई स्नूबु करो मर्दु मतारो—गोठनि जो सुधारो। ॥५॥

पईजाति में जा तगिविसी फूटि थी भाणे, छिक तानमें तणि
मेलाप मुहिब्बत सां करो तहिंखां किनारो—गोठनि जो सुधारो। ॥६॥

मन-भुती धुसामीअ जी हटाइबो विद्या सां, स्वराज्य सिख्या सां
भाराणु ग्रिपासीअ जो भजाइबो भगारो—गोठनि जो सुधारो। ॥७॥

'बेपति थो हरे डींदो भरहि रसम पुराणी बेकारि सा भाणी,
मर्यांदु करो घणु ऐं पैसो न पियारो—गोठनि जो सुधारो। ॥८॥

१९. ग्राम-सुधार

ग्राम-सुधार भारतमें नए रंगका दृश्य उपस्थित कर देगा। ग्राम-सुधार इस देशको नए ढाँचेमें ही बदल देगा।

भारतीयोंकी बड़ी संख्या गाँवों और बस्तियोंमें ही रहती है और ग्राम-सुधार अस्सी प्रतिशत जनतामें सुधार लाएगा ॥१॥

भारतकी जो कलाएँ उजड़ गई और जो धन्धे नष्ट हो गए, विस्मृत हो गए, ग्राम-सुधार उन्हें फिर दुबारा जगाकर जीवन-दान देगा ॥२॥

विद्या-हीन होकर जो अपने देशकी अवस्थासे अनभिज्ञ हो गए हैं और समाचार पत्रोंकी जानकारी से दूर हो गए हैं ग्राम-सुधार उन्हें विद्या-दान देकर प्रकाश देगा ॥३॥

मकान भी बड़े हैं वायु भी स्वच्छ है किन्तु सफाई न होनेके कारण बीमारियाँ फैल गई हैं, ऐसे कमजोरोंको ग्राम-सुधार स्वास्थ्यके नियमोंसे परिचित कराकर शक्तिवान बनाएगा ॥४॥

अपनी खेती-बारी करते हुए भी जो किसान भूखा और नंगा है, जवानीमें ही बूढ़ा बन गया है ऐसे किसानको ग्राम सुधार अन्नादि देकर हृष्ट-पुष्ट बना देगा ॥५॥

जो पञ्चायतोंमें फूट और खींचतान पैदा करती है उस तंगदिलीको ग्राम सुधार मिलाप और मुहब्बतसे दूर करेगा ॥६॥

ग्राम-सुधार विद्या द्वारा गुलामीकी मनोवृत्ति दूर करेगा और स्वराज्यकी शिक्षा द्वारा आजाद विचारोंका नगाड़ा बजाएगा ॥७॥

बेबस (लाचार) होकर जब वह उन पुरानी रूढ़ियोंको बेकार समझकर त्याग करेगा तब वह अपना प्यारा समय और धन व्यर्थ बरबाद न करेगा—ग्राम सुधार ॥८॥

२० देसी हुनिर

हिन्दुस्तान जे हुनिर खे हरि तरह हिमिथाइजो,
पंहिंजे मुल्क जो माल खे इ मुल्क में बरिताइजो,

मुंखे मुहिबत आहि बेहद पंहिंजे प्यारे देस सां
देस में घणे हुनिर हरि कारि खे हिमिथाइजो ॥१॥

थात मुंहिंजो सिर्फ़ घार्यो आ विदेशी माल जो,
मुल्क जो आनी मिठो, खारो ख़ुशीअ सां खाइजो ॥२॥

मसि हुजे सादो पुस्तो भलि साथ भी कोई हुजे,
देस पंहिंजे जो खपो, खद्दरो ख़ुशीअ सां पाइजो ॥३॥

हिन्दुस्तान जी नुकसान का सह न थे मुमकिन हुजे,
कौम न कौमें काटे समो राम शाह बिना उकिलाइजो ॥४॥

थे हुनिर खे हिन्दुवासी, थी फिरोई ध्यान कपास,
तिनि खे मशहूरी डेई, खाराइजो पहिराइजो ॥५॥

जे उम्मल हुंदी कलम में पैद हिन्दी सम्प्रदा
लाग मरिणे बैदि 'बेवसि' जो शक़ी, दारिमाइजो ॥६॥

———

१० स्वदेशी हुनर

भारतीयोंकी कलाको हर तरहसे उत्साहित किया जाएगा। अपने स्वदेशकी वस्तुओंका ही देशमें प्रयोग किया जाएगा।

हमें अपने देशसे अत्यन्त प्रेम है। अतः देशकी कला हुनर और प्रत्येक कामको उत्साहित किया जाएगा ॥१॥

हमने विदेशी वस्तुओंके प्रयोग न करनेका व्रत धारण किया है। देशकी खारी वस्तुको भी मीठा समझकर उसे काममें लाया जाएगा ॥२॥

चाहे काला कम्बल हो या कोई अपने देशकी वस्तु मानकर उसे प्रसन्नतासे ओढ़ा जाएगा ॥३॥

भारतीयों द्वारा निर्मित वस्तु यदि अप्राप्य हो, फिर भी उसके बिना किसी तरह समय काट लिया जाएगा ॥४॥

जो भारतीय बे-हुनर होनेके कारण कंगाल बन गए हैं उन्हें कोई न कोई काम देकर पालन-पोषण किया जाएगा ॥५॥

यदि हमारे कफनमें एक भी अभारतीय तन्तु बुनी हुई होगी, तो मरनेके बाद हमारी लाश लज्जित होकर शरमा जाएगी ॥६॥



११ गंगा जूं लहिरूं

'कीअं सिखो' जाणो दाो 'छा सिखो' सभि तूं,
कबुसि पूरी बांसुरी, फूकींदें गम तू,
पंधु करणु मूंखो पुखे, बाट पठी हलु तू,
यास मर्मा मसु तू, हिन 'बेर्मास' एं बे बोर बो ॥१॥

तो गम फूणया फूक मह, मूं बस कई पूरी,
काटे कूब क्रब्रूब मां, गायमि गम गरी,
रुबाहिल पृ.रि पृ.सबूह जी, मितर जीअ मौरी,
मथो हुम्म होरी, करि हिर्दे में हेम सां ॥२॥

धनु छमामे फासि मां, मापुसि पूबु बणी,
बेते भंबरि बाहु मां, बोली बिन्त भणो,
कोप गुग्या बे पोइता, हइ हइ छबियमि हुमो,
क्रोमलबारि कणी, मू कणिका कड़िकाए कई ॥३॥

जासल तां सहूबे पबे भम गातम जी जाण,
गुग्या रिसि जी बसिमो, विलिबर हसम कोपि
माछे बो गुल दर्स प, बहिरे भो बांठाणि,
बाकस जो कारा।ण, बांहु बिए गुल दर्स छे ॥४॥

मूं बयो महिबूब सां मठन जो माणो,
मबो बिपाइ मोचितो, मुरबत मांधाणो,
पणी विलोइ में पियो हहिरनि जो टाणो
बटो दास बामो, बोलो मिन्दिरे चित मां ॥५॥

९१ गंगाकी लहरें

किस प्रकार लिखूँ ?'—जानता हूँ। 'क्या लिखूँ ?' सिर्फ इसे ही तुम बता दो। मैं बंसी बजाऊँगा लेकिन मेरे गाल तुम ही फुलाओगे। मैं राह चल सकता हूँ लेकिन तुम मार्ग प्रदर्शन करो। हे कृपानिधे! तू ही इस बेबस और निर्बलका बल है ॥१॥

बाँसुरी बजानेके लिए तुमने मेरे कपोल प्रफुल्लित किए और मैंने बाँसुरी बजाई। मैंने अपने हृदयसे सारा कल्मष धो डाला। हे प्रियतम! अब आकर मेरे हृदयमें सोल्लास होली खेलो ॥२॥

विशिष्ट धन निधिसे बड़ी चाह और चेसमासे अति सुन्दर चिन्ता मणि ले आया हूँ किन्तु अफसोस! सांसारिक मायासे आकृष्ट होकर मैंने उसे फेंक दिया। हाय मैंने इस अमूल्य मणिके टुकड़े कर दिए! ॥३॥

साधसे अज्ञातका सहज ही भान हो जाता है। प्रियतमके दर्शनके लिए संसार रूपी हृदय मुकुर है। रूपमल्लिका ही सुख प्रदान करती है और संसारका दुःखमय वतनवासेको कालिमा ही दिखाई पड़ती है ॥४॥

मैंने अपने प्रियतमसे मक्खनके लिए मान किया, लेकिन उसने तो अचानक प्रेमकी मथानी ही डाल दी। आलोडन आरम्भ हो गया और बँध गया ठहाकोंका समा। प्रभु ऐसा करे कि मक्खनकी खासी बड़ी डली निकल आए ॥५॥

विछोड़े ते वसुल जो, जर्दहि थ्यो पारु,
मुहिबत मञाई कई, सिकन विञायो सारु,
वेसहि वा वि वधो रह्यो, क़ुरीम जो अधिकारु,
पालीम में रसु पाउ, त मानो शाख मंब में ॥६॥

बेहदि जे ब्रह्मांडमें, जहिंजो अन्तु न पारु
भटक सृष्टी मेम सां, वधो जहि ससारु,
दिसि बे वेरे ते वध्यो सो कुदि बदसु बारु
इश्क़ु अजबु इसिरारु, मींहुं वयो हो भाप खे ॥७॥

मूं जा दुनिया मांहि, सा सूरत सुपेयां,
अख्युनि मां अंधिकार जा, कटर खे केयां,
साम्हहि समुझ सही कयों, जे सुमरिणो सोयां,
मन-ममिणो फेयां, त दिसि वर्सम खे वीर में ॥८॥

'मां' पैदा थी 'मां ममां, मानव मंमां माउं,
मींहु विञायो मिलि थे, मांहि मयां प्यो माउं
कर्ता क़ुरिबानीम संबो, वाडो रिम्यो बाउ,
गदु गदापुरि जो गाउं, पो छक्नु जहिं छिन में छडियो ॥९॥

'मां पैदा थी 'मां' ममां माउं ममारां माउं
मारो मापुसि माउं थे, प्यो पाछी ते माउं,
बापु-बाद बराबार प्यो, सुख-नगर सुख गाउं,
किपि हंसराजु विपु बाउं छा मोती, मधु छा स्नो ॥१०॥

वियोगपर जब संयोगका अधिकार हुआ तो प्रेमने चुप्पी साध ली। उत्सुकताने मुझे बेहाल बना दिया, निकटसे भी विरह दूरीका भय बना रहा। यदि शालीमारके आममें छटाँक भर रस है तो पाल्ही* में पाव भर रस छलकता है ॥६॥

असीम ब्रह्माण्डमें जिसका न आदि है न अन्त। जिसने सृष्टिके अटल नियमसे संसारको बाँध लिया वही हृदय मन्दिरमें अबोध शिशुकी तरह बँध कर बैठ गया। प्रेमका विचित्र चमत्कार है। स्नेहने ही नाथको बाँधा था ॥७॥

जिसे मने संसार समझा वह तो मेरे प्रियतमका रूप है। यदि आँखोंसे अन्धकारका दुराग्रह दूर कर दूँ बुद्धि और ज्ञान (प्रतीति) को सन्तुलित कर यदि माला फेरूँ (बाहरकी माला छोड़कर) मन का मनका फेरूँ तो हृदय दर्शनके आनन्दमें समा जाए ॥८॥

'मैं उत्पन्न हुआ अहम्' से और आनन्दमें भरा प्रादुर्भाव हुआ। स्नेहने निरति को दूर कर दिया और 'नास्ति' पर ही नामका आधान हुआ। दर्शनने बलिदान करनेका बड़ा ही विचित्र ढंग रचा जिसमें उपकार प्रसन्नताका भाव ही त्याग दिया ॥९॥

'मैं उत्पन्न हुआ अहम्' से और मैं आरम से उत्पन्न हुआ। जब मने आरम का विरोध किया तो केवल भाम ही रह गया। बाग दाद (न्यायका बाग) बगदाद (अन्याय) हुआ और सुखनगर दुखनगर बन गया। कहाँ राजहंस और कहाँ काग! क्या मोती और क्या दुर्गन्ध युक्त विष्ठा ॥१०॥

* कच्चे आमको भूसी पालमें डालकर पकाया हुआ आम।

पढ़्या चढ़्या कीमकी, भड़िया अपांगे,
पारि न पहुता तारि मीं, तर्या न तांघे,
सहस न आंवा सोर ते, साह संबे सांघे,
स्नाड़्या सांघे, सहिमुंनि मोड़े मोड़िया ।।११।।

बेई बरबी कीमकी, तूं इबड़ करि उभिरी,
ठहिक्यो ठहिकनि कीम पा, पूंबर ऐं गुभिरी,
सा भगिरी सौ साम वां, वा साइत सब सुधिरी,
बेमसिं वाति सुधिरी, पर रहिमीम हेठि रह्यो रहे ।।१२।।

———

पढ़े हुए विद्वान चढ़ न सके। उल्टे अस्लंधमीयमें भड़ गए। प्रवाहसे पार न पहुंच सके और छिछलेमें भी तैर न पाए। सहस्रों मृत्युके भयसे प्रवाह तक ही न पहुँचे कई पद-दलित हो गए और कइयोंको लहरोंने डुबो दिया ॥११॥

बीता हुआ समय लौटकर नहीं आता। अत भविष्यको उज्ज्वल बनानेका प्रयत्न करते रहनेमें ही बुद्धिमानी है। बीता हुआ जीवन और आनेवाला भविष्य ये जीवनके ऐसे दो छोर हैं जिन्हें जोड़ा नहीं जा सकता। यह सत्य सदियोंसे यों ही चला आ रहा है। ऐसी स्थितिमें 'बेवसि' जी का यही कहना है कि मनुष्यको सत्प्रयत्नोंमें सतत लीन रहना चाहिए ॥१२॥

---

१२. फना में बका

न बुलबुलि हुस्न गुल ते मुस्तु बहारी ये बका आहे,
मिज़ाफ़त रंग रौनक़ जो, पड़ीअ छिन मंझ सफ़ा आहे।
चिमन में चेट पा चहि चहि बटे के रोज़ ही बहि पहि,
पिजा चमरो करे टहि टहि, फना आहे फ़ना आहे ॥१॥

सबीं भी साव मां सार्यूं, बिरह चार्यूं करे बार्यूं,
विछोड़े जू पकियूं रात्यूं सफा चमकियूं 'जफ़ा आहे ॥२॥

पुकारे पो क़फ़सु खाली, हमेशह नाहि ख़ुशिहाली,
फिरी सय्यादु पे, माल्ही, अजबु वरिको कजा आह ॥३॥

पटे बिसु गाह मां पतिरो, मसां बहि माक जो कतिरो,
ससीड़ो खिड़गो पतिरो, न हस्तीअ खे जटा आहे ॥४॥

पुहिब बुल्बुलि बिसो कयो चयो गुल "हाइ बेदर्दी!
हकीक़ी इश्क़ मर्दरि भी, मिज़ाजीअ जो मुबआ आहे ॥५॥

जमानो आहि बागनि मंझ बहार्यो बागु बागनि मंझ
चया बुल्बुलि मिमापनि मंझ, धयल गुल में बगा आहे ॥६॥

फुड़े में समुंडु प्यो साक़ी, रहे फ़ानीअ मर्दरि बाक़ी
फिरे 'बेवसि दगो पारी! मगरि खासो सबा आहे ॥७॥

———

३१. नश्वरतामें अनश्वरता

ऐ बुलबुल! फूलके सौन्दर्यपर मत भूल। यह आनन्द नश्वर है। सुकुमार और रंग-बिरंगी छटाका वचित्र्य क्षण भरके लिए है।

बगीचेमें बसन्तकी चकाचौंध दो-चार दिनोंके लिए है फिर पतझड़ ठहाका मारकर कहेगा कि यह सब फना है नश्वर है ॥१॥

बड़े ही लाड़के साथ चहक रही हो और विरहकी बातें कर रही हो, तब वियोगकी लम्बी-लम्बी रातें स्पष्ट कहेंगी—'यह सब जफा है।॥२॥

खाली पिंजरा कह रहा है कि वभव और समृद्धि सदा नहीं रहती। माली कसकर आखेटक बनकर फिर रहा है। आश्चर्य! यह मृत्यु बड़ी भयानक है॥३॥

किसी ओस बिन्दु युक्त घास पातको उठाकर देखो। वह बताएगा कि जीवनको भय लगा रहता है और अस्तित्वकी स्थिरता नहीं है॥४॥

बुलबुलकी चोंच रूपी कैंचीको देखकर फूलने कहा— हाय कठोरता! इश्क हकीकी (प्रभु प्रेम) में भी मिजाजी। ॥५॥

बगीचा कौओंके लिए है और बगीचा भी कष्टोंके लिए ही फूला है। बुलबुलने कहा—अभागोंके लिए फूलमें भी धागा है॥६॥

ए साकी बूंदमें ही समुद्र समाया हुआ है। नश्वरताम ही अनश्वरता शेष है। 'बेकसि' तो खाकी (मृत्यु लोक वासी) बनकर बिचर रहा है मगर जानी (प्रभु) नित्य है॥७॥

---

७३ सामूंडी सिपूं

थियों पुरू

गुप्तु गंगा ध्यान जो बी अमृती वेसे वहे
जो सचो टोबो हुने सो भसि अमुल्हु मोती सहे।
कोअ म मींहों वगि वारी, धम राजनि वासिले ?
जो किताबो ज्ञन मइ, पी तख्त विलि जे तां लहे। ॥१॥
मनु त पाणीअ जां हमेशह वहुक हेठाहीं वठे
पर विवेका पम्प सां वजिजी मथाहींअ ते वहे ॥२॥
म्यो उजड़ विलि जो मन्दर विसिबर जो पद वैरागु माहि,
कामु राजा जिति वसे किथे रामु वेचारो रहे ? ॥३॥
सल्तु विल्ह बर्सासि में कांहि राति सर्वाङ्गुमि मां उथी,
विपु त बाहिरि वे अमनि मइ वैसु छा छा जो वहे। ॥४॥
वर्दे जो वेवो करे थी मनुष्य जे मासा उत्तमु,
पिए गुहमि खां मनु माओ गाह में भिम भिम गहे ॥५॥
मज पारोखमि मूं कपायूं मूर्तिऊपूं मामितु पुमे,
पो मज़ोअ मसिजिद, मन्दर, देवसि टिकाणे खां टहे ॥६॥
जूपि चक्कर में चवनि उमतीम संतो इमिकानु पा,
मंचिसरे बाहितरि ठहण मइ भाइ मूर्नी पी वहे ॥७॥
आत्मा रूपी मंदर में थी अमर जोती जगे,
कोप पुहिना प्या पविलिअनि मौतु पी मिट्टी सहे ॥८॥
मूं पचाए फ़ासि गीफ़ा धीर जा मोलो कया
जम सराफ़ी परिख पसि, कीमति चही कोडिमूं चहे ॥९॥
एसु त गुम ताखा टियंल पर्वेनि मग्धी वेर्वासि थपूं,
कोम चूमागसु, कभो पो पुण्पु ठाकुर मइ ठहे ॥१०॥

---

२३ समुद्र-शुक्तियाँ

सनक सूसरी

अमृत वेला (प्रात काल) में ज्ञान गंगाकी गुप्त धारा प्रवाहित
ती है। सच्चे गोताखोरको असली मोती प्राप्त होते हैं।

धर्म और राज्योंके नामपर युद्ध क्यों न छिड़ेंगे? जब कि
र्योंको कैदमें बन्द होकर (मानवको) हृदय सिंहासनसे उतारते हैं ॥१॥

मन तो पानीकी तरह सदा निम्नगामी रहता है लेकिन विवेक
पी पम्पके जोरसे ऊँचाईपर उठता है ॥२॥

हृदय-मन्दिर उजाड़ हो गया है और प्रियतमका घर वीरान है। जहाँ
म (तृष्णा) राजाका निवास हो, वहाँ बेचारा राम कैसे रह सकता है॥३॥

किसी रात सख्त सर्दी और बारिशमें अपनी सौर (लिहाफ) से उठकर
खो कि बाहर निराश्रितोंके ऊपर क्या-क्या अत्याचार हो रहे हैं ॥४॥

दर्दकी देवी ही मनुष्यको उच्च बनाती है। कुपासे अन्न तभी
लग होता है जब वह मौड़ा जाकर कष्ट सहता है ॥५॥

आज प्रभु गरीबोंकी घास-फूसकी झोपड़ियोंमें घूम रहा है और मन्दिर,
स्जिद टिकाने * देवल और मढ़ी आदि से विरत हो गया है ॥६॥

योनियोंके चक्कर में उन्नति की सम्भावना मानी जाती है।
राना मकान सुन्दर बननेके लिए ही टूटता है ॥७॥

हृदयमें आत्मारूपी अमर ज्योति जग रही है पुराने कोश (आवरण)
स्त रहते हैं मृत्यु तो मिट्टी (शरीर) ही प्राप्त करती है ॥८॥

मन विशेष अश्रुओंको पकाकर ही काव्यके मोती निर्मित किए हैं।
मूल्यांकन तो सराफके हाथ है चाहे वह उसे मूल्यवान समझे या दो
कौड़ियोंका कहे॥९॥

चलो, ताजे खिले हुए फूल चरणोंमें अर्पित करें, मुरझाया हुआ फूल
या अविकसित पुष्प ठाकुरको अर्पित करना उचित नहीं है ॥१०॥

---

*सिक्खोंका वह पूजास्थान जिसमें गुरु नानकके 'गुरु ग्रन्थ साहब' की
स्थापना की जाती है। इसे टिकाने के विशिष्ट नामसे पुकारा जाता है।

सेहरों पूर

छा कवी तकिबीर उति, जिसि सहसु विसि समाहु आहि,
बुस्बुस्युनि सो याप में अब अप पुछो बेदाहु आहि,

बूंद शबनम में विसो मक़ुसो हयातीम जो बिसी,
ज़िन्दगी कहिडे अंदरि आबाहु ऐं बरिबाहु माहि ॥१॥

वासि लागापो तड़े जो इश्क़ आमोम में अड़्यो,
सो बदनु दुनिया विञी जो येव में आसाहु माहि ॥२॥

मम जे पर्व मां निकिती बांह माबिकु वर बी,
कहिड़ी कहिड़ो तेहिजे हेठां ऐ प्रलक फ़रियाद माहि ॥३॥

स्याम जो मुरिली वजे होवा मस्वरमें घुम सां
अग न बिरिराबम सदो क्रधो ! अम्यों सो वाहु आहि ॥४॥

धरम रोशम माइ हरिजा फेसयूफ़ो भी मचे,
एनजी अखि लइ मगरि बैठो किसायी धाहु माहि ॥५॥

फ़िक सां फोला कजे हुर हुपि पीरीं भी समे
पर असां में तो जिहो बखिबो किपे फ़रिहाद ! माहि ? ॥६॥

पूर्गि लहरा दुनिया मुंहं तां माहि दुप वसीं मग़रपु
सुख बसें लइ हुर दुनिया विसिरबा विसि दाबि आहि ॥७॥

छा सेवसि तम्बीह 'बेयसि माह तायां से कजे,
वद पूर्यो मानिाफ़नि लइ पूवि पूबा आबाद माहि ॥८॥

———

सतक तेरहवाँ

जहाँ माशूकका बड़ा कठोर हृदय है वहाँ मुक्ति किस कामकी। आज बुलबुलोंके साथ निश्चय ही बड़ा अत्याचार है।

ओस-कणमें नकली जीवनका आभास देखा। यह जीवन एक ही क्षणमें आबाद और एक ही क्षणमें बरबाद हो जाता है ॥१॥

विशेष सम्बन्धका त्याग कर जो विश्व प्रेममें मग्न है वह इह-लोक और परलोकके बन्धनोंसे मुक्त है ॥२॥

रहस्यके परदेसे दरदकी बड़ी मुलायम कराह निकली। ए आकाश! न मालूम तुम्हारे नीचे क्या-क्या फ़रियाद है! ॥३॥

सबके मन्दिरमें बड़ी ही धूमसे श्यामकी मुरली बज रही है लेकिन उद्धव! आज वृन्दावनमें वह श्याम नहीं है ॥४॥

ज्ञानकी आँखोंके लिए प्रत्येक स्थानमें दार्शनिकता नाच रही है लेकिन ऐनककी आँखवालोंके लिए ग्रन्थोंका वितण्डाचार है ॥५॥

यदि ध्यान और चिन्तासे खोजकी जाए तो प्रत्येक वस्तुमें माधुर्य मिलता है लेकिन ए फरहाद! तुम्हारी जैसी भावुकता और जज़्बा हममें कहाँ? ॥६॥

इस सुखपूर्ण संसारके मुखसे दुःखपूर्ण आवरण हटा दें तो यह संसार रूपी प्रेमिका अप्सरा आनन्दमय है ॥७॥

क्या उसकी उपमा चन्द्रमासे दी जाए? लेकिन प्रेमियोंके लिए सुन्दरतम प्रभु स्वयं विराजमान है ॥८॥

चोविहों पूरु

गुप्तु थेड़ दिलि जे मन्दर में प्रेम पूजा वासिते,
साजु सपु भद्रा फुलनि मुठि भोग भेटा वासिते।

मिसु हुसी महराब जे मुहताब जे महिरुयाब में,
गोलि का दर्शी दुखी दिलि श्याम शोभा वासिते ॥१॥

कोण दुनिया ते न हुपु हीरे कणी चिन्तामणी,
वसु मिल्यो मानमु बण्यें आतम उत्तमता वासिते ॥२॥

मुम्रु म मजहब मुश्तिस्क जो पिण अंदरि धबिराइजी,
याग दुनिया जा जुदा गुल सूंहं सोभ्या वासिते ॥३॥

टॉ पठी तो तुर्तु सबहों मूं जवहि बटपूं बई,
माहे बोमाई बराए पश्म पोना वासिते ॥४॥

चाह फेरे चोट तां फेरे थी कोटा भोट में
माहि स्वाहिन में पराबी मोट मना वासिते ॥५॥

हर रविश अंदरि हुमसु बरिकारि हरिकारि में
तो बिना हर चीज़ दुनिया चाह चिन्ता वासिते ॥६॥

चीर झूरी थी पसाए पर न वेसहि ते बहे,
कोन यो बारं मुसे हिन बिर मोल्या वासिते ॥७॥

साम अंदरि सासु हो मासमु सिकाए किअ सपे,
मा उद्रस मानव जो, थ्यो माडे माया वासिते ॥८॥

वाहरे इमिकान जां तूं मामलामु बाहिरि रहीं,
माहि माग्रेरो म र्रहि मी माह ममला वासिते ॥९॥

पुरु म हरगिज पुर्ज अंदरि माकसादिम जो निगानु,
झिकु 'बेवसि' दरि फना तलबो तमन्ना वासिते ॥१०॥

———

सनक चौदहवीं

प्रेम-पूजाके लिए हृदय मन्दिरमें कई गुप्त प्रवेश-द्वार हैं भोग धरने और भेंटके लिए अपने साथ श्रद्धाकी पुष्पाञ्जलि लो।

महाराज (प्रभु) से किसी गरीबकी आवश्यकता पूर्तिमें ही चलकर मिलो। श्यामकी सभाके लिए किसी दर्द भरे पीड़ित दिलका ढूंढो ॥१॥

इस खाक रूपी संसारपर चिन्तामणि रूपी हीरा कभी मत फेंको दम प्राप्त होनेपर ही आदम बने हो आत्मिक उन्नतिके लिए ॥२॥

विभिन्न धर्मोंका बाहुल्य देखकर न घबराओ। संसार रूपी बगीचेके भिन्न-भिन्न फूल शोभा और सुन्दरताके लिए हैं ॥३॥

जब मैंने दोनों (मिथ्यादृष्टी) आँखें बन्द की तब सून मेरा तीसरा नेत्र (प्रज्ञाचक्षु) खोल दिया। ज्ञान-चक्षुओं द्वारा ही सच्चा दृश्य दृष्टिगोचर होता है ॥४॥

तृष्णा ऊपर उठाकर फेंक देती है और करोड़ों योनियोंमें घुमाती रहती है। मनुष्यको गिरानेवाली वासना ही तो बुरी है ॥५॥

प्रत्येक कार्यके अन्दर तृष्णा और वासना समाई हुई है। तुम्हारे सिवाय प्रत्येक वस्तुकी इच्छा तृष्णा रूपी चिन्ताके लिए है ॥६॥

दृष्टि दूरीको ही दिखाती है निकटताको नहीं। मुझ इस मानियाके लिए कोई औषधि नहीं सूझती ॥७॥

तालके अन्दर भी प्यार था जिस प्यारे (प्रियतम) छिपा न सका। (सृष्टिका उद्भव) उसके आनन्दकी तरंग है और माया उस आनन्दका नाम है ॥८॥

ऐ बेघर (स्थानहीन)! तू स्थानके घरसे बाहर है। अनन्तके दर्शनके लिए न तो कहीं घोंसला है और न स्थान ॥९॥

कभी कुछ न माँगो, क्योंकि इस माँग (आवश्यकता) के अन्दर ही निकृष्टताके चिह्न हैं। अतः तृष्णा और कामनाका खात्मा (नाश) कर दो ॥१०॥